PUBLICATI
Ministry
LIBRARY

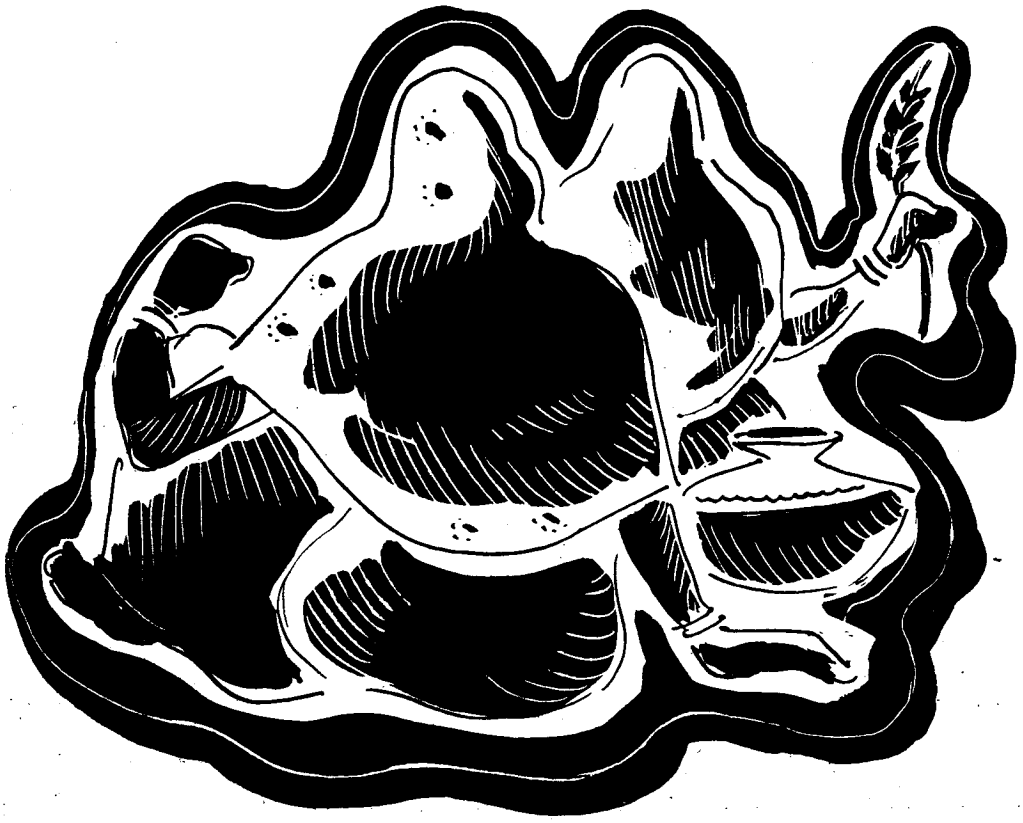

कुरुक्षेत्र

अगस्त
१९५६

एक महान् कृति

स्वाधीनता और उसके बाद

१९४६ से १९४९ तक के ऐतिहासिक काल में दिए गए, लोकप्रिय नेता जवाहरलाल नेहरू के ५९ भाषणों का अनुपम संग्रह। राष्ट्रीय भावनाओं से ओत-प्रोत, निर्माणकारी प्रयत्नों के लिए प्रेरक इन भाषणों से कौन भारतीय वंचित रहना चाहेगा।

सुन्दर, आकर्षक छपाई, व अनेक चित्रों सहित, ४४५ पृष्ठों वाले इस सजिल्द ग्रन्थ का मल्य केवल ५) है। डाक व्यय १-१०-० अलग।

★

नये प्रकाशन

मार्गदर्शिका

पश्चिम बंगाल और असम

पर्यटकों के लिए प्रकाशित हमारे साहित्य की हिन्दी में यह नवीनतम पुस्तिका है। इसका प्रकाशन ऐसे साहित्य की बढ़ती हुई माँग को देखकर किया गया है। पर्यटकों के लिए बहुत उपयोगी और जानकारीपूर्ण है। मूल्य ०-१२-०

शान्ति तथा सद्भावना की ओर

जून १९५४ से जुलाई १९५५ का समय आधुनिक इतिहास में संकट का काल है। इस पुस्तिका में उन वक्तव्यों और विज्ञप्तियों को स्थान दिया गया है, जिन पर भारत के प्रधान मन्त्री और कुछ अन्य देशों के कूटनीतिज्ञों ने इस काल में हस्ताक्षर किये। इन वक्तव्यों और विज्ञप्तियों में पंचशील के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया गया है और कुछ अन्य महत्वपूर्ण सिद्धान्तों पर भी प्रकाश डाला गया है, जिन पर भारत की आधुनिक पर-राष्ट्र नीति आधारित है।

१० रुपये या इससे अधिक के आर्डर पर कोई डाक-खर्च नहीं लिया जाएगा। मूल्य ०-८-०

पब्लिकेशन्स डिवीज़न,

ओल्ड सेक्रेटेरिएट, दिल्ली-८

कुरुक्षेत्र

सामुदायिक विकास-योजना प्रशासन का मासिक मुखपत्र

वर्ष १] अगस्त १९५६ [अंक १०

विषय-सूची

आवरण चित्र [कलाकार : सुशील सरकार]		
देश आगे बढ़ रहा है	जवाहरलाल नेहरू	२
ग्राम कल्याण	चक्रवर्ती राजगोपालाचारी	३
भारत की ग्राम पंचायतें	उच्छंगराय ढबर	४
बुद्ध और गान्धी	विनोबा भावे	७
वृक्षों का महत्व, रक्षा और विधि	सूर्यनारायण व्यास	८
दूसरी योजना में कृषि का स्थान	अजितप्रसाद जैन	११
सामुदायिक विकास कार्यों में साधनों का सदुपयोग	...	१३
गाँव कुबौलीराम की कहानी	चित्रावली	१५-१८
विकास की कहानियाँ	...	१९
गाँवों की बदलती रूप-रेखा	कलाशनाथ काटजू	२१
राधेलाल निस्सन्तान क्यों है ?	सावित्रीदेवी वर्मा	२५
श्रीनिकेतन के उद्देश्य	बजमोहन दाधीच	२८
प्रगति के पथ पर	...	२९

इस अंक की चित्रावली में प्रकाशित चित्र वर्मा शैल कम्पनी के सौजन्य से प्राप्त हुए हैं ।

सम्पादक :

केशवगोपाल निगम

[सहकारी सम्पादक, प्रकाशन विभाग]

उप-सम्पादक : *मनोहर जुनेजा*

मुख्य कार्यालय
ओल्ड सेक्रेटेरिएट,
दिल्ली—८

वार्षिक चन्दा २॥)
एक प्रति का मूल्य ।)

विज्ञापन के लिए
बिजनेस मैनेजर, पब्लिकेशन्स डिवीजन
दिल्ली—८ को लिखें

देश आगे बढ़ रहा है

जवाहरलाल नेहरू

अनेक यातनाओं और संकटों से गुज़रता हुआ हमारा देश आगे बढ़ रहा है। जो जोखिम और मुसीबतें इसने झेली हैं वे एक प्राचीन और मजबूत राष्ट्र को भी दबा देने के लिए काफी थीं। इस सफलता के लिए और दूसरी अनेक सफलताओं के लिए, जो हमारे देशवासियों को प्राप्त हुई हैं, हमें अपनी जनता को धन्यवाद देना चाहिए। यह उचित है कि अपने कामों को हम तुच्छ न समझें, और उस साहस, परिश्रम और त्याग को न भूलें जिससे हमारे देशवासियों ने इन संकट के वर्षों में बहुत-सी मुसीबतों का सामना किया है और उन पर विजय पाई है।

लेकिन हमें अपनी असफलताओं और ग़ल्तियों को भी नहीं भूलना चाहिए क्योंकि हमारी असफलताएँ और भूलें भी बहुत रही हैं। इन में से कुछ बहुत स्पष्ट हैं, लेकिन मुख्य असफलता तो एक आत्मिक दुर्बलता रही है, उन ऊँचे आदर्शों से गिर जाना रहा है, जिन्हें कि हमारे राष्ट्रपिता ने, जिनके योग्य नेतृत्व में हमने चौथाई सदी से अधिक समय तक अपनी लड़ाई जारी रक्खी थी और आगे बढ़े थे, हमारे सामने रक्खा था। उन्होंने हमें सिखाया था कि ऊँचे उद्देश्यों की सिद्धी ऊँचे साधनों द्वारा ही होती है। आदर्शों और उद्देश्यों को उन की प्राप्ति के साधनों से कभी अलग नहीं किया जा सकता। उन्होंने हमें भय को दूर रखना सिखाया था, क्योंकि भय केवल तुच्छ ही नहीं है, बल्कि घृणा और हिंसा को पैदा करने वाला है।

हम में से बहुतों ने यह पाठ भुला दिया और भय हम पर छा गया। यह भय किसी दूर के दुश्मन का नहीं था, बल्कि एक दूसरे का भय था।

कठिन परीक्षा के इन वर्षों से मुझे और भी अधिक विश्वास हो गया है कि यदि भारत को आगे बढ़ाना है और उसे महान बनाना है, जैसा कि उसे होना चाहिए और जैसा कि वह हो कर रहेगा, तो ऐसा गान्धी जी के सन्देश और शिक्षा पर दृढ़ रह कर ही किया जा सकता है। लेकिन हम चाहे कितने भी अयोग्य हों, हम में अब भी उस शक्ति का कुछ अंश है, जो हमारे नेता हमें दे गए हैं। वह शक्ति हमें उन से ही नहीं उनके सन्देश से भी प्राप्त होती है। इसलिए आज मैं मातृ-भूमि की सेवा और उन आदर्शों को, जिन्हें गान्धी जी ने हमारे सामने रक्खा था, फिर से शपथ लेता हूँ।

हमें अब अपने को फिर से पहचानना है और अपनी कल्पनाओं से स्वतन्त्र भारत को बनाना है। हमें पुराने मूल्यों को फिर से खोज निकालना है और उन्हें स्वतन्त्र भारत की नई रूपरेखा में स्थान देना है। स्वतन्त्रता ज़िम्मेदारी लाती है और आत्म-संयम, परिश्रम और स्वतन्त्र जनता द्वारा ही उसकी रक्षा हो सकती है।

इसलिए हमें उन सभी बातों को छोड़ देना चाहिए, जो हमें बाँधती हैं और गिराती हैं। हमें भय और साम्प्रदायिकता और प्रादेशिकता का त्याग करना चाहिए। हमें एक स्वतन्त्र और लोकतन्त्रात्मक भारत का निर्माण करना चाहिए जहाँ अपनी जनता का हित ही सबसे प्रथम स्थान रखता हो और दूसरे हित उसके अधीन समझे जाएँ।

स्वतन्त्रता का कोई अर्थ नहीं रह जाता, यदि वह हमारी जनता के अनेक बोझों को हलका नहीं करती। लोकतन्त्र का अर्थ सहिष्णुता है, केवल उन लोगों के प्रति सहिष्णुता नहीं, जो कि हमसे सहमत हैं, बल्कि उन लोगों के प्रति जो कि हमसे सहमत नहीं होते। स्वतन्त्रता की प्राप्ति के साथ-साथ हमारे व्यवहारों में परिवर्तन आना चाहिए, जिससे कि उनका इस स्वतन्त्रता से ठीक-ठीक मेल बैठ सके।

इसलिए मैं अपने देशवासी सभी स्त्री-पुरुषों से, जिनके हृदयों में भारत का प्रेम है और जो उसकी जनता को उठाना चाहते हैं, यह अनुरोध करता हूँ कि आपस में भेद उत्पन्न करनेवाली दीवारों को हटा दें और एक महान राष्ट्र के उपयुक्त इस ऐतिहासिक तथा विशाल प्रयास में मिल-जुल कर भाग लें।

सभी सरकारी नौकरों से चाहे वे फौजी हों चाहे गैर-

फौजी, मैं अनुरोध करूँगा कि वे दृढ़ श्रद्धा से भारत की सेवा करें और सच्चाई, परिश्रम, योग्यता और निष्पक्षता से अपने कर्तव्य का पालन करें। जो इस संकट के समय अपना कर्तव्य पालन नहीं करता वह भारत और उसके लोगों के प्रति अपने कर्तव्य से चूकता है।

देश के युवकों से मैं विशेष रूप से अनुरोध करूँगा, क्योंकि वे आनेवाले कल के नेता हैं और उन पर भारत के मान और स्वतन्त्रता की रक्षा का भार है।

मेरी पीढ़ी एक बीततो हुई पीढ़ी है और शीघ्र ही हम भारत की प्रज्वलित मशाल, जो कि उस की महान और सनातन आत्मा को प्रतीक है, युवा हाथों और सुदृढ़ बाहुओं को सौंप देंगे। मेरी यह कामना है कि वे उसे ऊपर उठाए रक्खें और उसके प्रकाश को कम अथवा धुंधला न होने दें, जिससे कि वह प्रकाश घर-घर में पहुँच कर हमारी जनता में श्रद्धा, साहस और समृद्धि उत्पन्न करे।

हम सभी भारत की चर्चा करते हैं और हम सभी भारत से बहुत बातों की आशा करते हैं। हम उसे इसके बदले में क्या देते हैं? जो कुछ हम उसे देते हैं, उससे अधिक हम उस से लेने के अधिकारी नहीं। भारत अन्त में हमें वही देगा, जो कि प्रेम और सेवा तथा रचनात्मक कार्य के रूप में हम उसे देंगे। भारत वैसा ही होगा जैसे कि हम होंगे हमारे विचार और कार्य उसे रूप प्रदान करेंगे। हम उसकी कोख से उत्पन्न बच्चे हैं, आज के भारत के छोटे-छोटे अंश हैं, साथ ही हम आने वाले कल के भारत के जनक हैं। हम बड़े होंगे तो भारत बड़ा बनेगा, और हम तुच्छ विचार वाले और अपने दृष्टिकोण में संकीर्ण बनेंगे, तो भारत भी वैसा ही होगा।

★

ग्राम कल्याण

चक्रवर्ती राजगोपालाचारी

सामुदायिक विकास कार्यक्रम की बुनियाद यह विश्वास है कि सरकारी कर्मचारियों और जनता के संयुक्त प्रयासों से ही ग्राम कल्याण हो सकता है। सफलता के लिए यह आवश्यक है कि इन प्रयासों में अच्छी प्रकार तालमेल बनाया जाए और नका उचित निर्देशन किया जाए।

हमारी योजना की सफलता हमारी कार्यशीलता पर निर्भर है। भगवान कृष्ण ने गीता में कर्म के महत्व को समझाया था। गान्धी जी ने भी कर्म करने के महत्व को अपने भाषणों में और लेखों में हमें समझाने की कोशिश की थी। जब कुछ व्यक्ति सब की भलाई के लिए कोई काम करते हैं तो वह कार्य अपने में प्रसन्नता का विषय बन जाता है। जल, अन्न और सड़कें सब एक मात्र हमारे प्रयासों और परिश्रम का फल नहीं हैं। किसी सर्वहितैषी कार्य में सहयोग देने से भी प्रसन्नता प्राप्त होती है। यह प्रसन्नता उस अमृत के समान है जो देवताओं के समुद्र मन्थन के समय उत्पन्न हुआ था। यह प्रसन्नता तो तभी मिलती है जब लोग एक साथ मिलकर कार्य करें। जुलाहे अकसर अलग-अलग अपनी-अपनी बुनाई करते हैं। लेकिन जब वह पावड़ी में मिलते हैं और हरेक हरेक के लिए काम करता है तो और ही मज़ा आता है। वातावरण उल्लासमय और हर्षोत्पादक होता है, जिसे दर्शक भी महसूस कर सकते हैं।

ग्राम कल्याण की प्राप्ति के लिए पहली आवश्यक वस्तु है खाद्यान्न का उत्पादन—यह खाद्यान्न अच्छा पोषक हो और पर्याप्त मात्रा में हो।

परन्तु मनुष्य को केवल अपने शरीर के लिए ही अन्न की आवश्यकता नहीं होती। उस को बुद्धि और उस की आत्मा को भी सहायता और दिग्दर्शन की आवश्यकता पड़ती है। इस के बिना न तो उस का विकास हो सकता है और न उसे प्रसन्नता प्राप्त हो सकती है।

ग्राम कल्याण कार्यक्रम में सुधरे हुए तरीकों से खेती, बेकार पड़ी हुई भूमि को कृषि योग्य बनाना और तमाम स्थानीय साधनों का उपयोग आदि कार्य शामिल हैं। अच्छी प्रवेश सड़कें बनाई जाएँ ताकि सामान जल्दी और आसानी से इधर-उधर ले जाया जा सके और आस-पास के गाँव भी

सड़क से सम्बद्ध हो जाएँ। शिक्षा, खेलकूद और मनोरंजन भी ग्राम कल्याण के भाग हैं। योजना के अन्तर्गत काम करनेवाले बालकों को पूरी शिक्षा देने की व्यवस्था और उन लोगों को जिनका कोई पारिवारिक धन्धा नहीं है टैकनीकल और धन्धे से सम्बद्ध शिक्षा देने की व्यवस्था का प्रबन्ध किया जाएगा। इन क्षेत्रों में जन-स्वास्थ्य संबंधी कार्य किए जाएँगे जैसे पीने के पानी की व्यवस्था और मनुष्यों और पशुओं के मल का उपयोग करने की व्यवस्था की जाएगी।

एक विद्वान् ने लिखा है (और उपनिषदों में भी इस आशय के कई श्लोक मिलते हैं) कि प्रकृति का आश्चर्य-जनक वर्कशाप में हर बेकार वस्तु का पुनः किसी नई और उपयोगी वस्तु में परिणत कर दिया जाता है। हर नष्ट होने वाला तत्व पुनः नया जीवित तत्व बन जाता है। हर वस्तु किसी न किसी प्राणी का अन्न होता है और मनुष्य की चातुरी इसमें है कि वह प्रकृति के इस महान नियम से लाभ उठा कर अपने आस-पास को साफ-सुथरा बनाए। बेकार वस्तुएँ भी अमूल्य हैं बशर्ते कि मनुष्य प्रकृति का और इस प्रकार स्वयं अपनी सहायता कर सकता हो।

इस समय गाँवों में आवश्यक डाक्टरी सुविधा का अत्यन्त अभाव है, इस लिए उन लोगों को जिन को इस की अत्यधिक आवश्यकता है, आवश्यक डाक्टरी सुविधा पहुँचाने की ओर विशेष ध्यान दिया जाएगा। ग्राम कल्याण का एक महत्वपूर्ण अंग है कुटीर उद्योग और छोटे उद्योगों का विकास क्योंकि इन में वे लोग खप जाएँगे जो अब किसान परिवारों पर बोझ के समान हैं। हर वर्ग के लोगों के लिए उन के काम और रहन-सहन के ढंग के अनुकूल आवास का प्रबन्ध किया जाएगा। पुरुषों, स्त्रियों और बच्चों के लिए अच्छे खेलों और सामुदायिक मनोरंजन कार्यक्रमों का आयोजन किया जाएगा। एक घंटे के अच्छे खेल से उतना आनन्द प्राप्त होता है जितना दौलत से नहीं खरीदा जा सकता।

सफलता इस बात पर निर्भर होगी कि लोग कितने उत्साह से काम करते हैं और अफसर कितने उत्साह से उन का निर्देशन और सहायता करते हैं। सामुदायिक कार्यक्रम सरकार की तरफ से जनता को दिया जाने वाला एक उपहार नहीं है। यह सब लोगों के लिए काम करने की एक योजना है—'लोगों' में सरकारी अफसर और विधान सभा के सदस्य भी शामिल हैं। काम करने की यह योजना खुशियों को जन्म देगी—उस उल्लास की जन्मदात्री होगी जो पुराने ज़माने में लोगों को प्रेरणा देता था और जिसको आधुनिक काल में लगभग भुलाया जा चुका है। मिल-जुल कर काम करने और समाज के लिए काम करने से जो उल्लास पैदा होता है, उस उल्लास को पुनर्जीवित करने का अर्थ है नई ज़िन्दगी। और इस सबका अर्थ है समाज के लिए नई ज़िन्दगी। इसको सामुदायिक विकास कार्यक्रम कहते हैं परन्तु वास्तव में यह है ग्राम कल्याण—लक्ष्मी का एक त्यौहार।

★

भारत की ग्राम पंचायतें

उच्छंगराय ढेबर

भारत एक विशाल देश है। शासन की सुविधा को ध्यान में रखते हुए ही यहाँ ग्राम समाज, ग्राम अर्थ-व्यवस्था और ग्राम पंचायतों पर अधिक बल दिया जाता है ताकि ग्राम का प्रत्येक व्यक्ति देश के प्रति अपने दायित्व को निभाते हुए अपने निजी विकास का भी अवसर पा सके। ग्राम हमारे समाज और अर्थ-व्यवस्था का आधार हैं और ग्राम पंचायतें शताब्दियों से इस व्यवस्था का माध्यम रही हैं। इसी तरह सामाजिक पूर्णता का कार्य तभी सम्पन्न हो सकता है और इसकी प्रगति तभी तीव्रतर हो सकती है जब साथ-साथ भावनात्मक पूर्णता भी आए। सचमुच भावनात्मक पूर्णता सामाजिक और मनोवैज्ञानिक पूर्णता के कार्य को सुगम बना देती है।

अंग्रेजों ने हमारी संस्कृति पर भी विजय प्राप्त करने के प्रयत्न किए और इसी उद्देश्य से उन्होंने हमारी ग्राम पंचायत व्यवस्था को नष्ट कर डाला। इसीलिए हमारे दृष्टिकोण को पुनः भारतीयता प्रदान करने की आवश्यकता है। ग्राम पंचायत शासन की केवल विकेन्द्रित इकाई ही नहीं है बल्कि

वह एक ऐसा माध्यम है जिसके द्वारा हम गाँवों को देश की प्रशासनिक, सामाजिक और आर्थिक समस्याओं पर अपने विचार प्रगट करने और भावनात्मक पूर्णता द्वारा एक सम्पूर्ण भारतीय समाज को विकसित करने का अवसर देते हैं। हम केवल यही नहीं चाहते कि गाँवों का प्रत्येक व्यक्ति ग्राम पंचायतों के माध्यम से देश के शासन में क्रियात्मक रूप से भाग ले बल्कि हम उसे यह अवसर भी देना चाहते हैं कि वह इस माध्यम से अपने आपको व्यक्त करे और एक आदर्श राज्य का आदर्श नागरिक बनने में प्रयत्नशील हो। लोकतन्त्र राज्य का यही लक्ष्य होना चाहिए क्योंकि केवल बहुमत द्वारा शासन ही लोकतन्त्र नहीं कहलाता।

इसी संदर्भ में हम भारतीय संविधान की उस धारा को पढ़ना होगा जिसमें ग्राम को लोकतन्त्रीय समाज की इकाई घोषित किया गया है। प्रश्न यह है कि विधान की इस मंशा को किस प्रकार कार्यरूप दिया जाए। इस समय गाँवों में जो परिस्थितियाँ हैं उन्हें भी हम भुला नहीं सकते। एक समय वह था जब ग्राम केवल हमारे राजनीतिक स्थायित्व और आर्थिक दृढ़ता की ही आधारशिला नहीं थे बल्कि हमारे सामाजिक और सांस्कृतिक विकास के भी प्रेरणास्थल थे। अंग्रेज़ों के शासनकाल में ही, और वह भी देश के तथाकथित कर्णधारों को उपेक्षा और उदासीनता के कारण हमारे ग्रामीण भाई लकड़ी काटने और पानी खींचने वाले मात्र बना दिए गए। शासकों द्वारा की जाने वाली उपेक्षा तो कहानी का एक ही पहलू है पर स्थानीय बुद्धिजीवियों द्वारा की गई उपेक्षा ने इसे पूरा कर दिया।

किसी भी भारतीय ग्राम की ओर देखते ही आपको तीन स्पष्ट अभाव दिखाई देंगे—(१) बुद्धिजीवियों का अभाव, (२) सुख-सुविधाओं का अभाव तथा (३) प्रेरणा का अभाव। इसी कारण जिस मूल स्रोत से हम समृद्धि और शक्ति प्राप्त करते थे वह गौण महत्व की वस्तु बन गया है। शहरी क्षेत्रों में अब भी ऐसे लोग हैं जो गाँवों को घृणा और अवहेलना की दृष्टि से देखते हैं। इन्हीं तीनों अभावों ने ग्राम समाज में पूर्ण पराश्रयता और निराशा की भावना उत्पन्न कर दी है।

इसलिए राज्य और समाज का यह कर्तव्य हो जाता है कि वे प्रशासनिक क्षेत्र में ही नहीं बल्कि मनोवैज्ञानिक औ भावनात्मक स्तर पर भी इनको ऊँचा उठाए। इसके विपरीत यदि हमने केवल ऊपरी ढंग से ही इस समस्या का समाधान करना चाहा तो हम ग्राम समाज में ऐसे तत्वों का प्रवेश करा देंगे जिससे स्थिति और भी बिगड़ जाएगी।

दूसरे हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि पारस्परिक स्वावलम्बन ग्राम समाज की मुख्य वस्तु है। अतः कोई भी योजना जिसे ग्राम समाज के लिए हाथ में लिया जाए सहकारी अस्तित्व की दिशा में सहायक होनी चाहिए। और तीसरे हमें गाँव के प्रत्येक व्यक्ति के हृदय में लोकतन्त्र के सिद्धान्त के प्रति सच्ची आस्था उत्पन्न करनी चाहिए। अंग्रेज़ों ने उसे अशिक्षित बनाया, शिक्षित समाज से उसका सम्पर्क हटाया और औपनिवेशिक अर्थ-व्यवस्था से उसका सम्बन्ध जोड़कर ब्रिटिश ताज के प्रति उसकी भावी भक्ति चाही जो एक असम्भव बात थी। इसलिए लोकतन्त्र से उसे प्रभावित करने से पूर्व यह आवश्यक है कि हम उसे 'अन्नदाता' का उसका गौरवपूर्ण स्थान पुनः प्रदान करें। उसके अस्तित्व को सार्थक बनाएँ और पराश्रयी न बनाकर स्वावलम्बी बनाएँ। ऐसा होने पर ही वह अपनी खोई प्रतिष्ठा पुनः प्राप्त कर सकता है।

सामन्ती ढाँचे में जिस प्रकार की पंचायतों का गठन अनिवार्य समझा जाता था उसकी आज आवश्यकता नहीं है। ज़मींदारी का अन्त ही सामन्ती विचारधारा का अन्त नहीं समझना चाहिए। इसलिए ग्राम पंचायतों का गठन और उनके कार्यक्रम की तस्वीर पुराने ढाँचे से सर्वथा भिन्न होगी। आज के गाँवों में चली आ रही पुरानी चौधरायतें, जिसे भारत के मानव समाज में हुए क्रान्तिकारी परिवर्तन का तनिक भी भान नहीं है, कुछ दिनों तक और घिसटती रहेगी। जिस नई चौधरायत की आज ज़रूरत है, वह एक दिन में नहीं खड़ी की जा सकती। इस बात को ऐसे तरीके से पूरा किया जाना चाहिए जिससे पारस्परिक द्वेष और मनमुटाव उत्पन्न न हो सके और प्रतिक्रियावादियों को खुल खेलने का अवसर न मिल पाए।

पर यह सब कैसे हो? मेरे विचार में हमें गाँवों की पुरानी चौधरायत के साथ मनोवैज्ञानिक ढंग से निपटना चाहिए। यह कार्य ऐसे योग्य और अनुभवी व्यक्तियों द्वारा किया जाना चाहिए जो गाँवों को समझते हों और सुगमता से इच्छित परिवर्तन ला सकें। इस कार्य की आशा आज के ज़िला

बोर्डों से करना बेकार है। इसके लिए सरकारी और गैर-सरकारी व्यक्तियों की एक समिति बनाई जाए जिसके द्वारा राजकीय तथा ग्राम्य साधनों को एकत्रित कर इस सम्मिलित अनुभव के आधार पर ग्राम सेवा का कार्य किया जा सके। मुझे यहाँ यह स्पष्ट कर देने में देरी नहीं करनी चाहिए कि इसका लक्ष्य पंचायतों का मार्गदर्शन और सहायता मात्र है न कि उन पर अधिकार करना।

यहाँ हम इन पंचायतों के अधिकार सम्बन्धी प्रश्न पर आ जाते हैं। यदि गाँवों में पूर्ण परिवर्तन लाना है, तो कर्तव्यों और साधनों की दिशा में कोई ढिलाई नहीं रहनी चाहिए। हमारे ग्राम पंचायत संगठन पर अंग्रेज़ी शासन के घातक वार उनकी आय और अदालती अधिकारों का अपहरण था। इसलिए हमें ये दोनों अधिकार उन्हें लौटाकर उस गलती का समाधान करना है। हमें ग्राम वासियों को यह विश्वास दिलाने का अनवरत प्रयत्न करना चाहिए कि जो कुछ उन्हें दिया जा रहा है, वह सत्ता का दिखावा मात्र नहीं है अपितु सच्चे अर्थ में वास्तविक अधिकार हैं। हमारा लक्ष्य पूर्ण विकास है। दूसरे शब्दों में कहें तो सत्ता का यह हस्तांतरण गाँवों के सम्पूर्ण सामाजिक जीवन को उन्नत करे। किसी गाँव में पंचायत के विकास का तात्पर्य यह है कि वहाँ नशेबाज़ी, अस्वास्थ्यकर परिस्थितियाँ, अशिक्षा और दूसरी बुराइयाँ जिनसे सामाजिक विषमता उत्पन्न होती हैं, समाप्त हो गई हैं! इन्हीं प्रयत्नों से ग्रामवासी मनसा, वाचा, कर्मणा पवित्र जीवन व्यतीत कर सकेगा।

गाँवों के सामाजिक जीवन का उत्थान भी इस कार्यक्रम का एक अंग ही है। गाँव और ग्राम समाज का आर्थिक विकास इसका दूसरा अंग है। विकास खण्डों और राष्ट्रीय विस्तार सेवाओं के रूप में भारत में यह इस कार्य का एक महान् प्रयोग चालू किया गया है। इस प्रसंग में मैं चुनाव की प्रणाली पर भी कुछ कहूँगा। लोकतन्त्र में विश्वास रखने वाला कोई भी व्यक्ति यह नहीं कह सकता कि चुनाव अनिवार्य नहीं हैं। पर इस मूल तत्व को भी नहीं भुलाया जा सकता कि सच्चे कार्यकर्ताओं के अभाव में कोई भी प्रयोग सफल नहीं हो सकता।

वोट के नाम पर जनता में भेदभाव उत्पन्न नहीं किया जाना चाहिए। वर्तमान परिस्थितियों में राजनीतिक दल, अपने कट्टर मानसिक विश्वासों को लिए हुए, सामाजिक पूर्णता की इस मलभूत आवश्यकता को भुलाए बिना और सामाजिक जीवन को हानि पहुँचाए बिना किसी भी हालत में काम नहीं कर सकते। इसलिए मैं बिना किसी हिचकिचाहट के यह कहूँगा कि दलगत चुनाव कराना गाँवों की सबसे बड़ी कुसेवा होगी। मैं तो विधान में भी इस आशय के परिवर्तन की माँग करना चाहूँगा। इतना ही नहीं, चुनाव की यह पाश्चात्य प्रणाली हमारे सामाजिक विकास की सम्पूर्ण भावनाओं को समाप्त कर देगी। हमें ऐसी किसी प्रणाली का आविष्कार करना चाहिए जिसके द्वारा सामाजिक भाई चारे को खोए बिना ही लोगों की इच्छाएँ जानी जा सकें।

अंग्रेज़ी नकल पर चुनाव करने की हमारी भावना ज़िला बोर्डों और नगरपालिकाओं के स्तर पर ही हमें बहुत खर्चीली पड़ती है। लोगों की इच्छा जानने के लिए चुनावों की अनिवार्यता को स्वीकार करते हुए भी यह मानना पड़ेगा कि महत्वपूर्ण विषय लोगों की इच्छा जानना है न कि चुनाव की एक विशेष प्रणाली। इसलिए मैं लोगों की इच्छा जानने की मौलिक प्रणाली का पता लगाने की बात कहता हूँ।

यदि हम गाँवों में एकता बनाए रखने पर बल देते हैं तो हमें प्रत्येक गाँव में ऐसे कुछ व्यक्ति मिल जाएँगे जिनमें सारे गाँव का विश्वास होता है। गाँवों में ऐसे व्यक्तियों की आवश्यकता है जो गाँववालों की इच्छा का पता लगा सकें और प्रचलित विचारधारा का ज्ञान कर सकें, न कि केवल निर्वाचन के नियमों को ही पूरा करें।

ये सब उस महा परिवर्तन के अंग हैं जो भारत में अभी आया है। पर यह कार्य चालू रहना चाहिए। हमारे कृषि श्रमिकों की हालत में अब भी कोई सराहनीय सुधार नहीं हो पाया। विषमता और सामाजिक अन्याय अब भी अपवाद न होकर नियम ही बने हुए हैं। जनता को समाजवादी ढाँचे पर लाने के लिए पंचायतें तभी उत्तम माध्यम बन सकती हैं जब कि राज्य की ओर से किए जाने वाले प्रयत्न और भी वेग के साथ किए जाएँ। ग्राम पंचायतों के हमारे महान् प्रयोग में सामाजिक विषमता एक बहुत बड़ी बाधा के रूप हैं।

हर प्राणवान वस्तु का एक कोमल पक्ष भी होता है। स्वयं प्राणों का जो औज़ार है उसकी देखभाल भी बड़ी सावधानी से की जानी चाहिए। यदि पचायतों को हमारे सामाजिक और राजनीतिक ढाँचे का आधार बनाना है तो इसकी देखभाल भी बड़ी सावधानी से की जानी चाहिए। हमारे लक्ष्य की जितनी पूर्ति इससे होगी उतनी ही यह दृढ़ तथा समृद्ध भी होगी।

★

बुद्ध और गान्धी

विनोबा भावे

बुद्ध भगवान् ने दुनिया को निर्वैरता की शिक्षा दी। उन्होंने कहा कि वैर से वैर का कभी शमन नहीं होता। उन्होंने यह जो तालीम दी, जो तत्व सिखाया, वह उनके ज़माने में भी नया नहीं था। आज तो वह नया है ही नहीं, परन्तु जब उन्होंने इसका उच्चारण किया, तब भी वह नया नहीं था। उनके पहले भारत में सैंकड़ों वर्षों का अनुभव था, तत्वज्ञान, आत्मा-अनात्मा का विवेक था। वेद, उपनिषद्, सांख्य, गीता—यह सब उसके पहले हो चुका था। वेदों ने हमें निर्वैरता की ही शिक्षा दी थी। "अगर मैं चाहता हूँ कि सारी दुनिया मेरी तरफ मित्र की निगाह से देखे, तो मैं भी सारी दुनिया की तरफ मित्र की निगाह से देखूँगा। "दुनिया को शत्रु या मित्र बनाना मेरे हाथ की बात है और मैं चाहूँ तो दुनिया को अपना मित्र बना सकता हूँ और चाहूँ तो शत्रु बना सकता हूँ। यह सारा अभिक्रम मेरे हाथ में है, दूसरे के हाथों में नहीं। मैं जैसा चाहूँगा वैसी दुनिया नाचेगी। वह बंदर है, मैं उसे नचाने वाला हूँ। हम दुनिया को वही रूप देंगे जो हम चाहेंगे। मैं मित्र की निगाह से देखूँ तो आईने में यह ताकत नहीं है कि वह दूसरी निगाह से मेरी तरफ देखे। मेरी आँखें निर्मल हैं तो आईना मलिन नहीं हो सकता। वह मेरी इच्छा के विरुद्ध दर्शन नहीं दे सकता। जैसे आईना मेरा प्रतिबिम्ब रूप है, वही हालत जड़ दुनिया की है। किसी भी तरफ देखो, सृष्टि अपार, अनन्त और असीम है। परन्तु चेतन के सामने विशाल दुनिया कुछ नहीं है, जैसे अग्नि के सामने लकड़ी का असीम ढेर कुछ नहीं होता, क्योंकि वह जड़ है। मैं दुनिया को जैसी शक्ल दूँगा, वैसी ही वह बनेगी। सारी दुनिया मेरे हुक्म से चल रही है। यह हिमालय मेरी ही आज्ञा से उत्तर की तरफ है। अगर मैं चाहूँ तो उसे दक्षिण की तरफ फेंक सकता हूँ। जब मैंने यह कहा तो एक लड़के ने मुझ से पूछा कि यह कैसे संभव हो सकता है? मैंने जवाब दिया कि अगर मैं हिमालय के उत्तर की तरफ जाऊँ तो वह दक्षिण में फेंका जाएगा। तब उसकी हिम्मत नहीं होगी कि वह दक्षिण में न जाए। इसी तरह मैं उसे सब दिशाओं में फेंक सकता हूँ। वह बड़ा है, परन्तु जड़ है और चेतन मैं हूँ। वह कपास के बहुत बड़े ढेर के समान है, लेकिन मैं अग्नि की चिनगारी हूँ। मैं उसे खाक कर दूँगा, वह मुझे जला नहीं सकता। इसीलिए कहता हूँ कि मैं चाहूँ तो दुनिया को मित्र या शत्रु बना सकता हूँ। यह मेरे हाथ की बात है, यह वेदों ने समझाया है। वेदों से लेकर बुद्ध तक हज़ार साल तक उसे दुहराया गया है। उसकी कसौटी की गई है। बुद्ध का अनुभव पक्का है। बुद्ध ने कोई नई बात नहीं कही। परन्तु उन्होंने यह बात जितने निश्चय से सामने रखी, उतने निश्चय से शायद ही किसी ने पहले रखी होगी। "वैर से वैर मिटता नहीं, क्रोध को अक्रोध से जीतो" यह बात बुद्ध अनुभव से स्थिर हो गई।

यह बात एक विचार के तौर पर मानी गई, परन्तु सारे समाज में उसका प्रयोग कैसे किया जाए—हमारी सारी समस्याएँ जो राजनैतिक, सामाजिक, कौटुम्बिक हैं, उस तरीके से कैसे हल की जाएँ, यह अब देखना है। बीच के ज़माने में पानी से अग्नि को नष्ट करने के, शांति से क्रोध को, निर्वैरता से वैर को मिटाने के प्रयोग हुए हैं। फिर भी वे सारे व्यक्तिगत अनुभव थे। उसका समाज में कैसे अमल किया जाए—यह मालूम नहीं था। विज्ञान के प्रयोग पहले छोटे पैमाने पर प्रयोगशाला में होते हैं, और वहाँ जब एक सिद्धान्त सिद्ध होता है, तो फिर व्यापक पैमाने पर उसे कैसे अमल में लाया जाए, यह देखा जाता है। इसी प्रकार जो निर्वैरता का, अहिंसा का प्रयोग बुद्ध वगैरह के जीवन की छोटी-छोटी प्रयोगशाला में सिद्ध हो चुका था, वही अब राजकीय क्षेत्र में हुआ। गान्धी जी ने अहिंसक तरीके से स्वराज्य प्राप्त करने का प्रयोग किया और उसमें हम सफल हुए।

★

वृक्षों का महत्व, रक्षा और विधि

सूर्यनारायण व्यास

कोई भी नगर, ग्राम, प्रासाद या घर वृक्ष और लता से सुशोभित न हो तो दृश्य और मन को आनन्दित नहीं करते, पल्लवित पुष्पित और फलित वृक्ष हृदय को आकर्षित करते हैं। चित्त को प्रफुल्लित करते हैं। भारत की पुरातनतम संस्कृति आश्रम, वन और आरण्यों की रही है। हमारे अनेक वृक्षों को पूजा का स्थान मिला है। देवता का वास उन में माना गया है। ऐसा केवल उनकी सुन्दरता के कारण ही नहीं है, उन की उपयोगिता भी उस में महत्व का कारण रही है। मानव और जीवमात्र के लिए वृक्ष तथा वनौषधियों का महत्व है, उन का जीवधारियों से उपकारक-सम्बन्ध है, प्रकृति ने भूमि पर मानव के पूर्व इन को जन्म दिया है। इस कारण भी इन की श्रेष्ठता और विशेषता है। इन्हीं के कन्द-मूल-फलों ने प्रारंभिक काल में मानव जीवधारी को पाला और पोसा है और आज भी ये प्राणि-पालन के लिए ही उत्पन्न होते हैं। कवि कोविदों को इन्होंने उल्लास और प्रेरणा दी है। इन की शीतल छाया में बैठ कर अनेकों ने साधना की है, सिद्धियाँ प्राप्त की हैं। विज्ञान की उन्नति में ये साधन बने हैं, शरीर विज्ञान में इन का महत्वपूर्ण योग है। मानव के पशु-पक्षियों के यही आश्रम स्थल रहे हैं। आज भी नगरों के कोलाहल से दूर एकान्त जंगल में जीवधारी विश्रान्ति लेकर शान्ति का अनुभव करता है। सभ्यता और संस्कृति के निर्माण में इन का महत्वपूर्ण योग रहा है। देवों के मस्तकों ने इन्हीं के फूलों को स्थल दे कर इन का महत्व स्वीकार किया है। वृक्षों की देह से लोल लताएँ लिपट कर लहराई हैं। प्रकृति ने इन से ही शृंगार किया है। मानव ने इनकी नकल उतार कर कला की अमर साधना की है। ये पहाड़ी पथरीली भूमि पर भी सुरभि बखेरते रहते हैं और कोमल भूमि तो इन को प्रफुल्लित बना देती है। हम बाग-बगीचे उपवन लगा कर प्रकृति की उपासना करते हैं। वृक्ष और लताएँ पुरुष एवं स्त्री के समान ही हैं, इसका प्रत्यक्ष प्रयोग हमारे समक्ष विज्ञान ने कर दिखाया है।

बाँस का वन

हजारों वर्ष पहले छांदोग्य उपनिषद् ने ज्ञान और अनुभव के आधार पर प्रस्तुत किया था। परन्तु हम ने वृक्षों की उपेक्षा कर प्रकृति के पुत्रों के सुभग शृंगार की बहुत अवहेलना की है। वृक्षों की वास्तविक उपयोगिता को न समझ, केवल सौंदर्योपासना तक ही हम ने उन को सीमित बना दिया है।

जहाँ आयुर्वेद शास्त्र ने वृक्षों के समस्त अंग-प्रत्यंग की उपयोगिता पर गहरी छान-बीन की है, वहाँ वृक्षों के लिए भी स्वतन्त्र उपचार की योजना में अनेक आचार्यों ने मानव की तरह ही स्वास्थ्य सुविधा की व्यवस्था का विचार किया है। ज़मीन पर कोई भी पेड़ पौधा निरर्थक नहीं है, जिस का कोई उपयोग न हो। साधारण दृष्टि से निरर्थक समझे जाने वाले पौधे भी अपने में कई गुण छिपाए हुए रहते हैं। आचार्यों ने वनस्पति विज्ञान को जिस गहराई से खोज की है, वह आश्चर्य में डाल देने वाली है। लाखों पेड़ पौधों से उन्होंने निकट परिचय प्राप्त किया है और उन के गुण धर्मों को खोज निकाला है। सदियों पूर्व जिस सर्पगंधा को पुराने आचार्यों ने महत्वपूर्ण पाया है, आज का वैज्ञानिक जग भी उस के प्रभाव से प्रभावित हो रहा है। परन्तु भौतिक भावना से अभिभूत हो हम प्रकृति के निकट परिचय से दूर होते जा रहे हैं। यह बड़े खेद की बात है। कुछ समय से वन के महत्व को समझने के लिए प्रकृति के परिचय में हम प्रेरित हो रहे हैं। यह प्रसन्नता की बात है। यहाँ हम महान् आचार्य वराह मिहिर के उन अनुभव जन्य प्रयोगों को प्रस्तुत कर रहे हैं, जिनके द्वारा वृक्षों को लगाने, पनपाने, पोषित करने की उपयोगी क्रियाएँ समझी जा सकती हैं।

जिस ज़मीन पर कोई बाग बगीचा या पेड़ पौधा लगाना हो, पहले हमें तिल को बो देना चाहिए। जब वे तिल पनप जावें और उन के फूल खिल जावें, तब उन फूलों को मसल कर ज़मीन में फैला दें। इस से उस ज़मीन की उर्वर-शक्ति बढ़ जाती है, उत्पादन क्षमता स्निग्ध हो जाती है। बाग या घर के पास नीम, अशोक, केले, जामुन, लिकुच (वडहर), दाडिम, दाख, पालीवत, बिजौरा और मुक्तक की कलमें लेकर गोबर में लपेट लें और उसे किसी पेड़ के मूल में या शाख को काट कर उस पर लगा दें। जिन वृक्षों की शाखें पैदा न हुई हों, उन को सावधानी के साथ एक स्थान से उखाड़ कर दूसरी जगह अपनी दिशा के बीच में शिशिर ऋतु में लगाया जा सकता है और जिन्हें शाखा उत्पन्न हो गई हो उन्हें हेमन्त ऋतु में एक स्थान से दूसरी जगह बदला जा सकता है। ज़्यादा शाखा वाले वृक्षों को वर्षा में पलटा जाए तो हानि की शंका नहीं रहती। जब किसी पेड़ को एक

देवदारु का वन

जगह से दूसरी जगह पलटना हो तब घी, खश, तिल, शहद, बाईबिडंग, दूध और गोबर में पीस कर जड़ से ले कर ऊपर तक लपेट कर फिर आसानी से पलट देने में हानि की शंका नहीं रहती। वही पत्ते हरे बने रहते हैं। जो पेड़ लगाए जाएँ उन्हें गर्मी में दोनों समय जल सिंचन करना चाहिए। शीत काल में एक दिन के बाद जल दिया जावे और वर्षा में ज़मीन सूखने पर ही जल दिया जावे।

जामुन, बेल, बानीर, कदम्ब, गूलर, अर्जुन, बिजौरा, दाख, बडहर, दाडम, बंजुल, नवतमाल, तिलक, कठहर, तिमिर, अंवाड़ा ये १६ वृक्ष जहाँ जल अधिक होता है, वहीं उत्पन्न होते हैं या टिक पाते हैं। इसी प्रकार एक वृक्ष से २० हाथ की दूरी पर ही दूसरा पेड़ लगाना चाहिए। १६ हाथ की दूरी पर साधारण तथा १२ हाथ की दूरी पर ठीक नहीं रहता। जो पेड़ बहुत निकट लगे हों और आपस में जिनकी जड़ें मिल जावें तो उन की वृद्धि में कठिनाई होती है, साथ परस्पर प्रभाव भी ठीक नहीं होता और वे फैलने भी नहीं पाते हैं। बहुत शीत हवा और तेज़ धूप से वृक्ष भी मनुष्य की तरह रोग के शिकार बन जाते हैं। पत्ते पीले होने लगते हैं, अंकुर बढ़ने नहीं पाते, शाखें सूखती हैं और रस पोषण नहीं हो पाता। ऐसे पेड़ों की जो शाखा सूख रही हो उसे सावधानी से काट दें। बाद में बाय-बिडंग, घी और कीचड़ को मिला कर पेड़ों को लपेट दें और दूध में पानी मिला कर सींचते रहने से उसे फायदा होता है।

वृक्ष में यदि फल नहीं उगते हों तो कुलथी, उर्द, मूंग, तिल और जब दूध में डाल कर औटा लेवें। उस दूध को ठंडा कर के वृक्ष को बार-बार सींचते रहें; अवश्य फल मिलने लगेंगे। इसी प्रकार भेड़ और बकरी की मेंगनी का चूरा दो गुना, एक गुना तिल, सत्तू एक सेर, एक द्रोण जल इन सभी को एक पात्र में डाल कर सात रात तक रखें, फिर वृक्ष या बेलों को फल-पुष्प के लिए सींचते रहने से लाभ होता है। कोई भी बीज हो उस को घी के हाथ से चुपड़ कर दूध में डाल दें। दस दिन बराबर घी चुपड़ कर दूध में डालते रहें और गोबर से सुखा लें। सूअर और हिरण के माँस की धूप दे दें। सूअर और मछली के माँस के साथ (जिस भूमि को तिल बो कर ठीक कर ली गई हो) ज़मीन में बो देवें, दूध मिले पानी से सींचते रहें तो फूल के साथ वृक्ष उत्पन्न होता है। इमली का बीज काफी कड़ा होता है। उसे धान, उर्द, और तिल के चूर्ण, सत्तू और सड़े हुए माँस में रख कर हल्दी की धूप देने से उस में भी अंकुर आ जाते हैं। पनपने में तो संदेह का कारण ही नहीं। कैथ (कचीट) के बीज से यदि उस की बेल बनाना हो तो विष्णु क्रांता, आवला, धव, वसा, पत्ती के साथ वाला वेतस, सूर्यमुखी, निसोंद और अतिमुक्तक की जड़ ले कर इन को दूध में डाल कर औटा लेवें, दूध को ठंडा कर के कैथ के बीजे को उस में डाल दें, सिर्फ दोनों हाथ से १०० ताली बजावें।

इतनी देरी तक रख कर बीज को निकाल लें। दूध में ही सुखाएँ, यह नियम एक मास तक जारी रखें, फिर उस बीज को बो देवें, एक हाथ लम्बा-चौड़ा, दो हाथ गहरा गढ़ा खोद कर उस को उसे जड़ पिये दूध से भर दें, दूध सूख जाने पर फिर उसे आग से जला दें। शहद, घी, राख को मिला कर गढ़े को लीप दें, मिट्टी में उर्द, तिल और जो के चूरे को मिला दें। गढ़े को भर दें फिर मछली के (भरी हुई) साथ मिला कर गढ़े को चारों ओर ढांक पीट दें। जब वह कड़ा हो जावे, उस में चार अंगुल नीचे वही कैथ का बीज बो दें, मछली के सड़े जल से सींचा जावे, तब बढ़िया पत्तों वाली बेल बन जाएगी। मण्डप को आच्छादित कर देगी।

अंकोल वृक्ष के फल के गूदे से या अंकोल के तेल से अथवा लासोड़े के फल से या तेल से किसी भी बीज को सौ भावना दे दीजिए (सौ बार भिगो दें) फिर ओलों से भीगी हुई मिट्टी में बो देवें, उसी क्षण वह बीज जम जाता है। फूलों के भार से लता झुक जाती है। चतुर व्यक्ति लासौड़ के बीज लेकर उस का छिलका उतार ले, अंकोल के फल से भीतर का गूदा जल में भिगो कर बीज को ७ बार गोला कर सुखावें। उस बीज को भैंस के गोबर में घिस कर सूखे गोबर के ढेर में रख दें, ओले पड़ने पर जब मिट्टी भीग जावे, तब उस मिट्टी में बो दें, तब एक ही दिन में वृक्ष उगकर फल दे देगा। वृक्ष लगाने के लिए तीनों उत्तरा, रोहिणी, मृग, रेवती, चित्रा, अनुराधा, मूल, विशाखा, पुष्य, श्रवण, अश्विनी, हस्त ये नक्षत्र बहुत उपयोगी होते हैं। इन में बीज को रस पोषण मिलता है और वे पनप जाते हैं।

दूसरी योजना में कृषि का स्थान

अजितप्रसाद जैन

दूसरी पंचवर्षीय योजना के विभिन्न कार्यक्रमों के रूप में हमने बड़े-बड़े काम करने का बीड़ा उठाया है। भविष्य में अनाज और दूसरी चीज़ों की अधिक आवश्यकता होगी। हमें पहली योजना में बहुत कुछ सफलता कृषि उपज में वृद्धि होने के कारण ही मिली है। दूसरी योजना की सफलता भी कृषि उत्पादन पर ही निर्भर है। अभी तक हम राष्ट्र की सेवा में पीछे नहीं रहे और भविष्य में भी पीछे नहीं रहेंगे। सब लोग यह अनुभव करते हैं कि दूसरी योजना में कृषि उपज के जो लक्ष्य निर्धारित किए गए हैं, उन में काफी वृद्धि होनी चाहिए। इस दृष्टि से दूसरी योजना में अनाज की पैदावार १ करोड़ टन करने का लक्ष्य है। तेलहन की उपज २७ प्रतिशत, ईख की उपज २२ प्रतिशत, कपास की ३१ प्रतिशत और पटसन की २५ प्रतिशत बढ़ाने का विचार है। इस योजना में हम अन्य प्रकार के खाद्य पदार्थों जैसे फल, मछली, मुर्गे-मुर्गी, दूध और दूध से बनने वाली अन्य चीज़ों के उत्पादन बढ़ाने पर भी बहुत ज़ोर देंगे। १९६०-६१ तक हम खेती-बाड़ी की चीज़ों का उत्पादन औसतन १८ प्रतिशत, अनाज का १५ प्रतिशत और अधिक आमदनी वाली फसलों का २२ प्रतिशत बढ़ा लेंगे।

खाद्य तथा कृषि मंत्रालय ने आरम्भ में खेती के कामों के लिए ६६३ करोड़ रुपए की माँग की थी, पर मिला कुल ३४१ करोड़ रुपया है। इस प्रकार खेती के लिए पहली योजना से (२४१ करोड़ रुपए) १०० करोड़ रुपया अधिक मिला है। फलों आदि वस्तुओं की पैदावार बढ़ाने के लिए इस योजना में अधिक धन की व्यवस्था की गई है पर इस में आम फसलों के लिए पहली योजना से भी कम धन दिया गया है। पहली योजना में आम फसलों के लिए १९६ करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई थी, पर इस योजना में यह राशि कुल १७० करोड़ रुपए रखी गई है। इसी प्रकार सिंचाई की बड़ी और दरमियानी योजनाओं के लिए नियत धन ३८४ करोड़ रुपए से घटा कर ३८१ करोड़ रुपया कर दिया गया है। बाढ़-नियंत्रण के कामों के लिए निस्संदेह अधिक धन रखा गया है। इससे अप्रत्यक्ष रूप से खेती को लाभ पहुँचेगा।

दुनिया भर में किसानों की आय शहरों और कारखानों में काम करनेवाले मज़दूरों से कम है। १९५० में कारखानों के मज़दूरों की औसत आय ९६७ रुपए थी। इसके मुकाबले १९५०-५१ में कृषि मज़दूरों की आय केवल २०० रुपए ही थी। दूसरी योजना में राष्ट्र का समूचा उत्पादन २५ प्रतिशत बढ़ाने का लक्ष्य है और कृषि उपज में केवल १८ प्रतिशत की ही वृद्धि होगी। इस हिसाब से कल कारखानों में काम करने वाले लोगों और किसानों की आय में दूसरी योजना के अन्त में आज से भी अधिक अन्तर हो जाएगा।

राष्ट्रीय विकास परिषद का मई में जो अधिवेशन हुआ था उस में बहुत से लोगों ने यह विचार व्यक्त किया कि आन्तरिक उपयोग के लिए, निर्यात के लिए और यदि मुद्रा-बाहुल्य हो तो उस की रोक के लिए कृषि उपज लक्ष्य से अधिक बढ़ाने की आवश्यकता है। मुद्रा-बाहुल्य को रोकने के लिए योजना आयोग ने एक नोट में यह सुझाव दिया है कि योजना के अनुसार जो साधन उपलब्ध हैं, उन्हीं के उपयोग से कृषि उपज में ४० प्रतिशत वृद्धि होनी चाहिए और इन चीज़ों का मूल्य २० प्रतिशत कम होना चाहिए। गेहूँ और चावल का भाव भी क्रमशः १० रुपए मन और ११ रुपए मन तक ले आने का सुझाव दिया गया है। आयोग का विचार है कि ऐसा करने से किसानों को निश्चय ही लाभ होगा। इसके बाद कृषि उपज ४० प्रतिशत या ३० प्रतिशत बढ़ाने के भी कई सुझाव दिए गए हैं। यह भी कहा जाता है कि यदि हम २०-३० लाख टन अनाज बाहर भेज सकें, तो हम १०० करोड़ रुपए की विदेशी मुद्रा और कमा सकेंगे। पर मैं इस विचार से सहमत नहीं। इस योजना में जितने धन की व्यवस्था की गई है उससे अनाज की पैदावार ४० प्रतिशत नहीं बढ़ सकती। मेरे मंत्रालय के अधिकारी और विशेषज्ञ इन दो प्रश्नों का जवाब ढूँढ़ने के लिए दिन रात एक कर रहे हैं—

(क) क्या खेती के वर्तमान लक्ष्य बढ़ाए जा सकते हैं और यदि बढ़ाए जा सकते हैं तो योजना में नियत राशि के बढ़ा देने से उन में कितनी वृद्धि हो सकती है?

(ख) ऐसे क्या उपाय किए जाएँ, जिनसे दूसरी योजना में निर्धारित उत्पादन और भी बढ़ सके और वृद्धि की योजनाओं की रूपरेखा और खर्च की क्या व्यवस्था हो?

दूसरी योजना में विदेशी मुद्रा की बहुत आवश्यकता पड़ेगी। योजना के पांचों साल में ११०० करोड़ रुपए का घाटा होने का अनुमान है। इसे पूरा करने के लिए हर सम्भव उपाय करना होगा। हमें अधिक से अधिक माल का निर्यात करने का प्रयत्न करना चाहिए। अविकसित देशों से कच्चे माल का

ही निर्यात हो सकता है। पिछले सालों के निर्यात को देख कर हम कह सकते हैं कि अधिकांश विदेशी मुद्रा हमें चाय, तेल, तम्बाकू, कपास, और पटसन के माल के निर्यात से ही प्राप्त हुई है। योजना की सफलता के लिए हमें तेलहन, कपास, तमाखू और चाय-कहवा इत्यादि अधिक लाभ वाली चीजों का अधिकतम निर्यात करना चाहिए। योजना आयोग ने भी खेती-बाड़ी से सम्बद्ध कुछ ऐसे कामों को प्रोत्साहन देने के लिए राज्य सरकारों को लिखा है, जिससे पैदावार बढ़ाने में मदद मिले। केन्द्रीय खाद्य तथा कृषि मन्त्रालय इस निष्कर्ष पर पहुँचा है कि यदि कुछ आवश्यक बातें पूरी हो सकें तो १९६०-६१ तक १९५५-५६ से १ करोड़ ३५ लाख टन अधिक अन्न पैदा किया जा सकता है। दूसरी योजना में इस अवधि में १ करोड़ टन की वृद्धि का लक्ष्य रखा गया है। इस प्रकार अन्न की उपज में २१ प्रतिशत वृद्धि हो सकती है। योजना का लक्ष्य १५ प्रतिशत वृद्धि का है। हमारा विश्वास है कि दूसरी योजना के पहले तीन वर्षों में बढ़िया किस्म के बीजों का अधिकाधिक उपयोग करके १९ लाख टन और पैदावार बढ़ाना सम्भव होगा। सिंचाई के छोटे-मोटे साधनों के विस्तार से भी पैदावार ७ लाख टन और बढ़ाई जा सकती है। उर्वरकों और खाद के अधिक प्रयोग से भी ९ लाख टन उत्पादन और बढ़ सकता है। नए प्रस्तावों के अनुसार कपास का उत्पादन ३१ प्रतिशत की जगह ३७ प्रतिशत बढ़ाया जाएगा। पटसन, गन्ने और तेलहनों की पैदावार भी क्रमशः ३७.५ प्रतिशत, ३१ प्रतिशत और ३६.४ प्रतिशत बढ़ानी है, जब कि वर्तमान लक्ष्य क्रमशः २५ प्रतिशत, २२ प्रतिशत और २७ प्रतिशत हैं। हमें यह देखना है कि (१) वर्तमान योजना से, (२) निर्धारित रकम से ही वर्तमान योजनाओं में फेर-बदल करने से और (३) नई योजनाओं से कितनी पैदावार बढ़ाई जा सकती है। तीसरे उपाय के लिए अतिरिक्त धन की भी आवश्यकता पड़ेगी। पैदावार बढ़ाने के लिए यह भी आवश्यक है कि किसान के लिए प्रेरणात्मक वातावरण तैयार किया जाए।

पैदावार बढ़ाने की योजनाओं को क्रियान्वित करने के लिए उचित वातावरण तैयार करने का काम मुख्य रूप से विस्तार सेवा और सामुदायिक विकास-योजना संगठन करते हैं। जिन सामुदायिक विकास-योजनाओं और राष्ट्रीय विस्तार सेवा खण्डों में पैदावार बढ़ाने पर विशेष ध्यान दिया गया है, वहाँ ज़िले के बाकी भागों की अपेक्षा २० से २५ प्रतिशत तक पैदावार बढ़ गई है। पर सामुदायिक विकास-योजनाओं और राष्ट्रीय विस्तार सेवा खण्डों की ताज़ी रिपोर्ट से पता चलता है कि कई जगह विकास-योजना अधिकारियों ने अपना अधिक ध्यान भवन बनाने और जनसाधारण की सुविधाओं के बढ़ाने लगाया है। तुरन्त दिखाई देने वाले लाभों पर विशेष ध्यान दिया गया है न कि उन बुनियादी बातों पर जिनसे बाद में अधिक लाभ होता है। मेरा इरादा स्कूल, अस्पताल और पंचायत घरों का महत्व कम करने का नहीं है। पर किसी विकास-योजना अधिकारी की सफलता इस बात से आँकनी चाहिए कि उसके योजना क्षेत्र में पैदावार कितनी बढ़ी है। किसान तो उस ग्राम सेवक का अनुग्रह मानेगा जो उसे एक बाल की जगह दो बालें पैदा करने में सहायता देगा। पैदावार बढ़ाने का उद्देश्य तभी पूरा हो सकता है जब कृषि विभाग और विस्तार सेवा में निकट सम्पर्क हो। ग्राम सेवक के काम में कृषि को सबसे अधिक महत्व मिलना चाहिए। एक विस्तार कार्यकर्त्ता के अन्तर्गत जो ग्राम हों, उनमें कुओं, नालों आदि की संख्या और वितरण किए जाने वाले बीजों, उर्वरकों तथा खाद की मात्रा के लक्ष्यों के साथ-साथ खेती के नए तरीकों के इस्तेमाल के लक्ष्य भी निर्धारित किए जाने चाहिएँ।

पिछले कुछ समय से शहरी जनता में अनाज और दूसरी कृषि-जन्य वस्तुओं के भाव चढ़ने से चिन्ता बढ़ती जा रही है। पिछले कुछ महीनों से भाव कुछ चढ़ते जा रहे हैं। अक्तूबर १९५५ से अब तक चावल के भाव १७.७ प्रतिशत और दालों के भाव ८.७ प्रतिशत चढ़ गए हैं। बाज़ार में नई फसल आने से पहले छः महीनों में गेहूँ के भाव ११.५ प्रतिशत चढ़ गए थे। बाजार में काफी गेहूँ आ जाने पर भी गेहूँ के भाव अभी साधारण स्तर पर नहीं पहुँचे। तेलहनों के भाव भी ४१.६ प्रतिशत चढ़ गए हैं। पर हमें यह बात नहीं भुला देनी चाहिए कि पिछले वर्ष कृषि-जन्य वस्तुओं के भाव यहाँ तक गिर गए थे कि भाव स्थिर रखने के लिए सरकार को गेहूँ खरीदना पड़ा। यद्यपि आजकल के भाव १९५४ और १९५५ के भावों से अधिक हैं पर अब भी ये १९५३ के भावों से कम हैं। मेरी समझ में चिन्ता का कोई कारण नहीं है, पर सन्तोष की भी कोई बात नहीं।

अनाज और कृषि-जन्य पदार्थों के भावों का महत्व उत्पादक के लिए भी उतना ही है जितना उपभोक्ता के लिए। यदि उत्पादक को उचित दाम न मिलेंगे, तो पैदावार बढ़ाने के लिए उस में कोई उत्साह न होगा। योजना आयोग ने सलाह दी है कि ४० प्रतिशत पैदावार बढ़ाने के साथ-साथ भाव २० प्रतिशत घटा दिए जाएँ और गेहूँ के भाव १० से ११ रुपए प्रति मन पर स्थिर रखे जाएँ। आयोग की राय में पैदावार के ४० प्रतिशत बढ़ने और भाव के २० प्रतिशत घटने के बावजूद भी उत्पादक को काफी लाभ रहेगा। मुझे खेद है

[शेष पृष्ठ १४ पर]

सामुदायिक विकास-कार्यों में साधनों का सदुपयोग

फोर्ड फाउंडेशन के सलाहकार श्री एम० एल० विल्सन ने, भारत में सामुदायिक विकास कार्यक्रम पर, अपनी रिपोर्ट में कहा है—"मुझे ऐसा लगता है कि भारत के इस कार्यक्रम में, सामाजिक परिवर्तन और ग्राम-जीवन का विकास करने के लिए, देश के सभी साधनों का आधुनिक ढंग पर इतना अच्छा उपयोग किया जा रहा है, जैसा पहले किसी भी देश में नहीं किया गया।"

श्री विल्सन को सामुदायिक विकास-योजना प्रशासन ने सामुदायिक कार्यक्रम पर अपनी राय देने के लिए बुलाया था। अपनी रिपोर्ट में इन्होंने यह सुझाव दिया है कि कार्यक्रम में किस तरह और सुधार किया जा सकता है।

श्री विल्सन का, अमरीका के विस्तार आन्दोलन से, गत ५० वर्षों से सम्बन्ध रहा है। यह इस विषय के विशेषज्ञ माने जाते हैं। श्री विल्सन गत मार्च से भारत आए हुए हैं। उन्होंने देश के विभिन्न भागों में लगभग दो महीनों तक १६ सामुदायिक विकास खण्डों तथा १७ प्रशिक्षण केन्द्रों के कार्य प्रणाली की जाँच की है।

श्री विल्सन ने बताया है कि व्यापक दृष्टि से विचार करने पर पता चलता है कि भारत के सामुदायिक विकास कार्यक्रम में रचनात्मक विचार तथा सामाजिक खोज की भावना से काम किया जा रहा है। इसके संगठन के कुछ तरीके बिल्कुल नए हैं और समस्याओं पर नई दृष्टि से विचार किया जा रहा है। अगर भारत का यह प्रयोग सफल रहा तो संसार भर में इसका बहुत असर होगा।

श्री विल्सन ने अपनी रिपोर्ट में इस बुनियादी सवाल पर भी विचार किया है कि भारत का सामुदायिक कार्यक्रम 'जनता का कार्यक्रम' है या नहीं। इस सम्बन्ध में उन्होंने कहा है कि मुझे दो तरह के लोग मिले। एक तो ऐसे लोग जो इस कार्यक्रम को सरकारी कार्यक्रम समझते हैं और लक्ष्यों की पूर्ति पर विशेष बल देते हैं और दूसरे ऐसे जो यह समझते हैं कि इस कार्यक्रम का लक्ष्य व्यक्ति का निर्माण तथा उसके दृष्टिकोण में परिवर्तन करना है। श्री विल्सन ने इस कार्यक्रम के मानवीय पहलू को विशेष महत्व दिया और अन्त में निष्कर्ष निकाला है कि यह कार्यक्रम जनता का कार्यक्रम होकर रहेगा'।

प्रतिवेदन में योजना को चलाने के विभिन्न पहलुओं पर विचार किया गया है और अनेक सुझाव दिए गए हैं। ग्राम सेवकों के बारे में श्री विल्सन का कथन है कि जैसी उनकी कल्पना थी वे लगभग वैसे ही निकले। श्री विल्सन की राय में जो ग्राम सेवक अच्छा काम करे, उसे आगे बढ़ने के पूरे अवसर दिए जाने चाहिएँ। यद्यपि प्रत्येक ग्राम सेवक की काम करने की क्षमता, काम सीखने की प्रतिभा और प्रशिक्षण में अन्तर होता है, लेकिन ऐसा लगता है मानो उनमें सेवा-भावना, उत्साह और विस्तार कार्य को समझने की पूरी शक्ति है। वे अथक परिश्रमी और कर्मठ हैं।

योजना के अन्य कर्मचारियों और विशेष कर खण्ड विकास अधिकारियों तथा विस्तार कर्मचारियों के बारे में श्री विल्सन ने सुझाव दिया है कि उनका प्रशिक्षण और अधिक विस्तृत तथा नए ढंग से होना चाहिए। उनका मत है कि एक सफल खण्ड विकास अधिकारी को बहुत कुछ जानना चाहिए इसलिए उसका प्रशिक्षण ऊँची श्रेणी का होना आवश्यक है जिससे वह प्रशासन का यथेष्ट ज्ञान प्राप्त कर सके। लेकिन मुझे ऐसा लगता है कि इस प्रकार के प्रशिक्षण के महत्व को अभी समझा नहीं जा रहा है। उन्होंने लिखा है कि कुछ राज्यों में विकास-आयुक्त के कार्यालय और विकास-खण्डों के बीच सम्पर्क बढ़ाने की बहुत आवश्यकता प्रतीत होती है।

विस्तार कर्मचारियों के बारे में श्री विल्सन का विचार है कि वे अपना काम बखूबी समझते हैं और उनके अपने मन्त्रालयों से भी अच्छे सम्बन्ध हैं। परन्तु वे योजना के मनोवैज्ञानिक पहलू को पूरी तरह से नहीं समझ पाए हैं और कभी-कभी उन में मिल कर काम करने की भावना का भी अभाव पाया जाता है।

सामुदायिक विकास कार्य के अन्तर्गत महिलाओं के लिए जो कार्य किए जा रहे हैं, उन पर भी श्री विल्सन ने प्रकाश डाला है। प्रारम्भ में सामुदायिक विकास कार्यक्रम में कोई भी महिला विस्तार कर्मचारी नहीं थी। श्री विल्सन कहते हैं, यह प्रसन्नता की बात है कि इस समय २७ केन्द्रों में ग्राम सेविकाएं प्रशिक्षण ले रही हैं और गाँव वाले घरेलू काम-काज सिखाने के कार्यक्रम की उपयोगिता को समझ गए हैं और अब वे इस कार्यक्रम को सन्देह की दृष्टि से नहीं देखते।

श्री विल्सन की राय में, योजना क्षेत्रों में ग्राम-पंचायतों के विकास का बहुत महत्व है क्योंकि यह तो जनता को शासन की ट्रेनिंग देने की संस्था है। इसी तरह खण्डों के प्रशासन

तथा प्रबन्ध के लिए विकास सलाहकार समितियों का भी काफी महत्व है ।

श्री विल्सन ने अपने प्रतिवेदन के अन्त में दो बातों पर फिर से ज़ोर दिया है। एक तो सामुदायिक विकास-योजना के कार्य के मूल्यांकन पर और दूसरा सामुदायिक कार्यक्रम के सम्बन्ध में अध्ययन तथा गवेषणा करने के लिए केन्द्रीय संस्था खोलने के सुझाव पर। यह सुझाव आजकल भारत सरकार के विचाराधीन है। वह लिखते हैं कि "भारत के सामुदायिक विकास-योजना जैसे तेज़ी से फैलते हुए आन्दोलन पर इन दोनों बातों का बहुत बड़ा प्रभाव पड़ेगा और इससे भारत के ग्रामीणों का ही लाभ नहीं होगा, बल्कि इससे संसार के समस्त ग्रामीणों के कल्याण में बहुत योग मिलेगा।"

★

दूसरी योजना में कृषि का स्थान--[पृष्ठ १२ का शेषांश]

कि मैं आयोग की इस राय से सहमत नहीं हो सकता । मुझे मालूम नहीं कि आयोग ने किस आधार पर भावों में २० प्रतिशत की कमी का सुझाव दिया है । सभी उत्पादक अपनी पैदावार ४० प्रतिशत नहीं बढ़ा सकेंगे। कुछ ४० प्रतिशत से भी अधिक बढ़ा पाएँगे और कुछ ४० प्रतिशत से कम । कुछ किसान पैदावार बिल्कुल ही नहीं बढ़ा पाएँगे । अधिकतर छोटे-मोटे किसान अपनी पैदावार २० प्रतिशत भी नहीं बढ़ा पाएँगे और ऐसे किसानों को भाव कम होने से अवश्य हानि होगी। उन का लाभ कम हो जाएगा और इस तरह पैदावार बढ़ाने में उनको कोई उत्साह नहीं रहेगा । आपको कृषि-जन्य पदार्थों की भावों की समस्या पर गम्भीरतापूर्वक विचार करना होगा ।

किसी कम विकसित अर्थ-व्यवस्था में घाटे की अर्थ-व्यवस्था और बढ़ती हुई आमदनी का प्रभाव मुख्य रूप से अनाज और कपड़े पर ही पड़ता है और थोड़ी आमदनी वाले परिवार अपनी आय का ७० प्रतिशत भाग अनाज और कपड़े पर व्यय करते हैं। इसलिए सुस्थिर अर्थ-व्यवस्था और वेतन स्तर के लिए अनाज के उचित भावों का होना आवश्यक है।

काफी सोच-विचार के बाद कृषि मन्त्रालय इस निष्कर्ष पर पहुँचा है कि काफी मात्रा में अनाज का स्टाक जमा किया जाए और इस तरह भावों पर नियंत्रण रखा जाए । हमने दस लाख टन चावल और इतना ही गेहूँ सुरक्षित रखने का फैसला किया है । इस में से कुछ अनाज चालू वर्ष में जमा किया जाएगा और शेष आगामी वर्ष में। मुझे विश्वास है कि बिना राशन और वसूली के हम खुले बाज़ार में उचित भावों पर अनाज उपलब्ध करा सकेंगे। साथ ही अनाज की कमी दूर करने और माँग के बराबर पूर्ति करने के लिए भी हमें सदैव प्रयत्नशील रहना चाहिए।

[हाल ही में राज्यों के कृषि मन्त्रियों के सम्मेलन में दिए गए भाषण का सारांश]

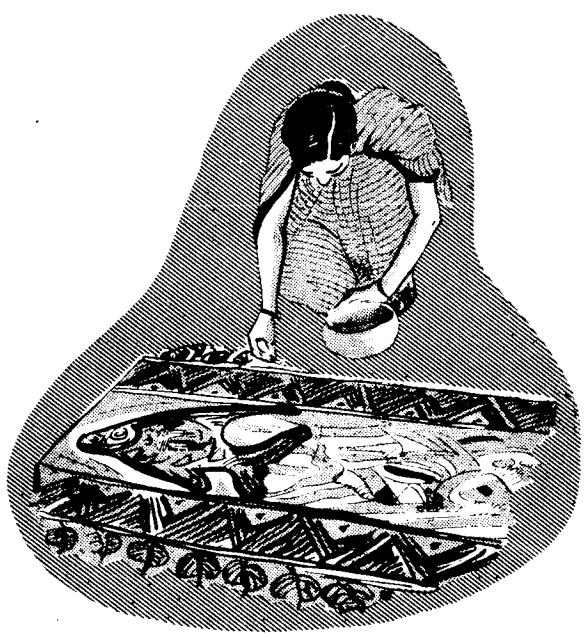

प्रौढ़ों की रात्रि कक्षा

गाँव कुबौलीराम की कहानी

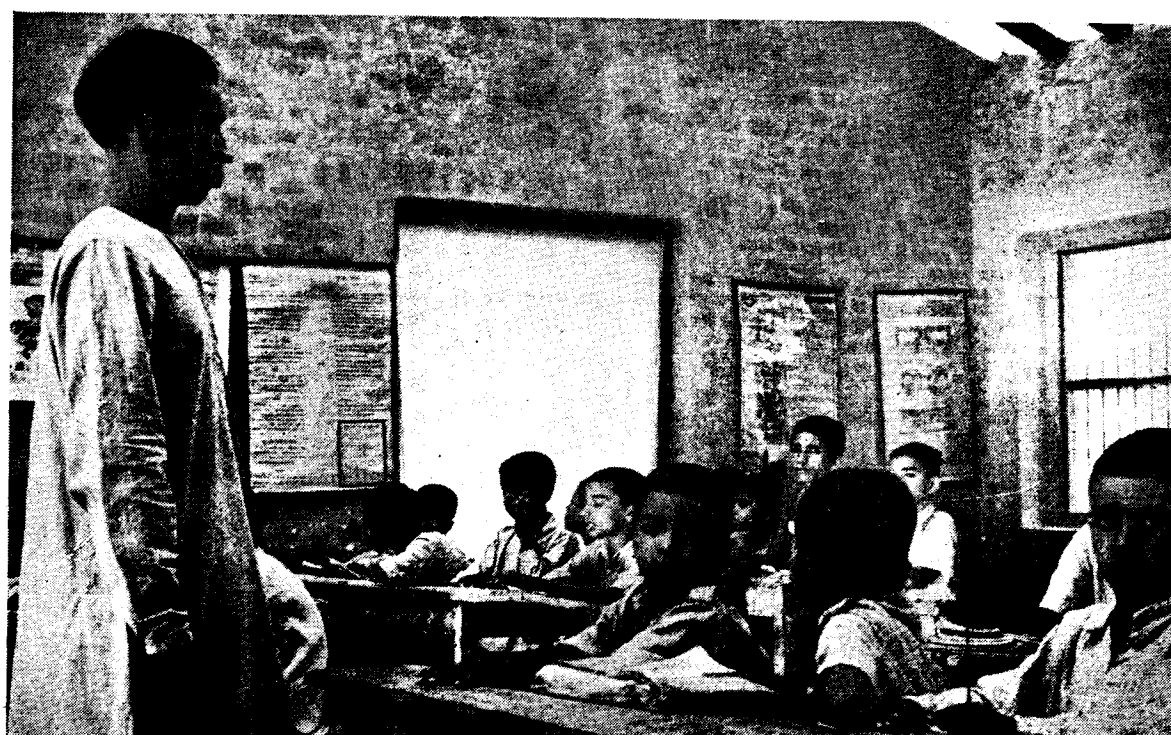

नवनिर्मित स्कूल में

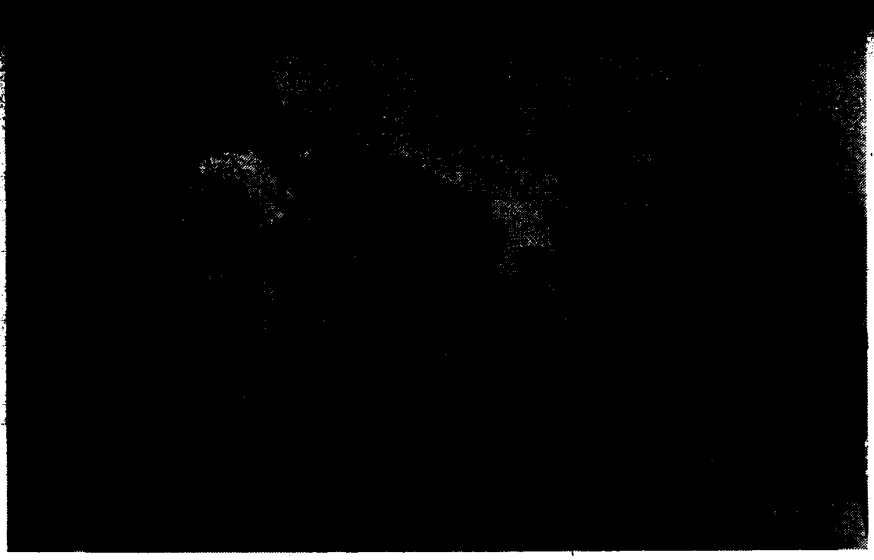

विनाशकारी बाढ़ का एक दृश्य

गाँववाले बाढ़ से

बाढ़-पीड़ित गाँववाले

श्रमदान द्वारा सड़क का निर्म

बाढ़ का पानी उतरने की प्रतीक्षा में

लिए बाँध बना रहे हैं

ग्राम सेवक द्वारा एक रोगी बच्चे का उपचार

नव-निर्मित स्कूल की एक झाँकी

पशु-चिकित्सक से निरीक्षण कराने के लिए गाँववाले अपने मवेशी लिये खड़े हैं

कृषि अधिकारी गाँववालों को जापानी प्रणाली सिखा रहा है

डाक्टर नियमित रूप से गाँव का दौरा करता है

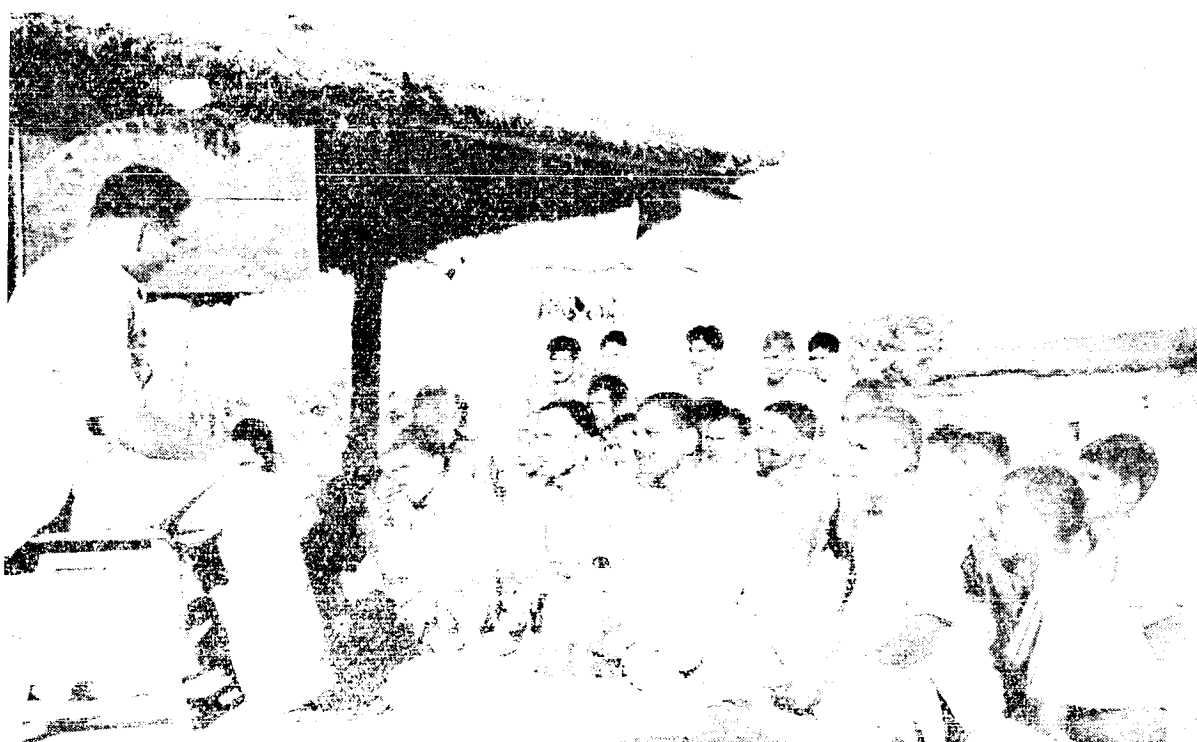

[illegible]
रहा है

विकास की कहानियाँ

:१:

योग्य नेतृत्व

पेप्सू में कोटकपूरा-भटिण्डा सड़क पर कोटकपूरा से १४ मील के फासले पर एक गाँव है—बाजाखाना । यह गाँव सामान्य गाँवों जितना ही बड़ा है और इसका क्षेत्रफल ३,८२५ एकड़ है । औसत खेत बहुत छोटे थे और इसी कारण खेती का स्तर भी काफी नीचा था । गाँव की गरीबी का यह मुख्य कारण था ।

गाँववालों का विश्वास प्राप्त करने के लिए आरम्भ में अनेक प्रयत्न किए गए । उन सभी चीज़ों पर ज़ोर दिया गया जिनका कृषि विकास से सम्बन्ध था जैसे अच्छी किस्म के बीजों और उर्वरकों का वितरण और बेहतर औज़ारों का प्रचार । इसके साथ-साथ गाँव की भूमि की चकबन्दी भी शुरू कर दी गई । परिणाम काफी उत्साहवर्द्धक रहा । थोड़े ही समय में कुछ ऐसे लोग आगे आ गए जिन्हें गाँव के सभी लोगों का विश्वास प्राप्त था । गाँव के इन विश्वासनीय नेताओं की सहायता से अब सामुदायिक कार्य भी आरम्भ किए गए । गाँव की ज़रूरतों की एक सूची तैयार की गई और उनमें से जो अधिक महत्वपूर्ण थीं उनको प्राथमिकता दी गई ।

इस सूची में सबसे ऊपर स्कूल की इमारत, पशुओं के अस्पताल के लिए इमारत, गलियों को पक्का करना, पक्की नालियाँ बनाना और हरिजन बस्ती के लिए पीने के पानी की व्यवस्था करना आदि काम थे । कोई भी काम शुरू करने से पहले लोगों को इस बात की चेतावनी दे दी जाती थी कि सरकार के साधन तो सीमित हैं, इस लिए वह कुछ सीमा तक ही लोगों की सहायता कर सकती है, लोगों को अधिकतर अपनी ही सहायता पर निर्भर करना पड़ेगा । गाँव के स्कूल के लिए इमारत तैयार हो चुकी है । पशुओं के अस्पताल की इमारत भी पूरी तैयार हो चुकी है । यह दोनों इमारतें नाममात्र सरकारी सहायता लेकर तैयार हुई हैं । इन पर लगभग २५ हज़ार रुपए लागत आई है । सरकार ने इसमें से केवल ३,५०० रुपये की ग्रांट दी थी । प्राइमरी स्कूल को अब मिडिल स्कूल में परिणत कर दिया गया है और इसे अब बेसिक स्कूल बना दिया गया है । पशुओं के अस्पताल की साज-सज्जा में भी काफी बढ़ोतरी की जा चुकी है ।

इसके पश्चात् गाँव में एक संयुक्त कृषि समिति की स्थापना की गई । विस्तार कर्मचारियों ने ऐसी समिति की स्थापना का सुझाव गाँववालों के सामने रखा था । उनकी दलीलों से प्रभावित हो १८ किसानों ने एक संयुक्त कृषि-समिति की स्थापना कर इसे रजिस्टर करवा लिया ।

:२:

इज्ज़त का सवाल

समस्तीपुर खण्ड (बिहार) में एक गाँव है केओस। पिछले कई सालों से यहाँ भूमि के एक छोटे से टुकड़े को लेकर दो दलों में मुकदमेबाजी चल रही थी। दोनों दलों ने मुकदमे को अपनी इज़्ज़त का सवाल बना लिया था। दोनों तरफ से पैसा पानी की तरह बहाया जा रहा था। मुकदमा चलते तो काफी समय हो गया था लेकिन अब तक कोई फैसला नहीं हुआ था। इस अवसर पर प्रोजेक्ट अधिकारियों ने मामले में दखल दिया और दोनों दलों को मुकदमेबाजी के नुकसान समझाए। दोनों दल अपनी खून-पसीने की कमाई फूँक कर सबक तो काफी सीख चुके थे लेकिन झुकने को कोई तैयार नहीं था। बहुत कहने-सुनने पर सुलह करने को तो वे तैयार हो गए परन्तु प्रश्न था कि उस भूमि के टुकड़े का क्या किया जाए। और जब तक उस टुकड़े के सम्बन्ध में कोई ऐसा फैसला नहीं किया जाता जो दोनों दलों को मंज़ूर होता कुछ भी सफलता मिलने की सम्भावना नहीं थी।

प्रोजेक्ट अधिकारियों ने काफी सोच-विचार के बाद यह हल निकाला कि दोनों दलों से भूमि स्कूल की इमारत बनाने के लिए दान में ले ली जाए। दोनों दलों को यह बात सुझाई गई और वे राज़ी भी हो गए। इस प्रकार वर्षों पुराना झगड़ा खतम हो गया और जो लोग एक-दूसरे के जानी दुश्मन बने हुए थे, आपस में मित्र बन गए। जब सहयोग से काम हो, तो सफलता अवश्य मिलती है। स्कूल की इमारत तैयार होते देर न लगी। वह दिन भी आ पहुँचा जब स्कूल का उद्घाटन हुआ। उस अवसर पर सारा गाँव वहाँ उपस्थित था। उपस्थित लोगों में दोनों दलों के व्यक्ति थे। स्कूल की इमारत बनवाने में दोनों दलों ने उतने ही चाव से काम किया जितने चाव से वे मुकदमे के लिए दौड़-धूप किया करते थे।

:३:

पिता और पुत्र की लगन

बिहारशरीफ सामुदायिक विकास-योजना क्षेत्र के गाँव अरावन में वहाँ के ग्राम सेवक ने गाँववालों की एक सभा बुलाई थी। इस सभा का आयोजन गाँव में एक सहकारी समिति बनाने के उद्देश्य से किया था। जब प्रोजेक्ट के कार्यकर्त्ता उस गाँव में पहुँचे तो उन्होंने देखा कि उस स्थान पर केवल दो व्यक्ति उपस्थित थे—एक पिता और पुत्र। दोनों बड़ी लगन से गाँव की गलियों की सफाई कर रहे थे। गाँव के बाकी लोग इस काम में कोई दिलचस्पी नहीं दिखा रहे थे। ये दोनों उत्साही व्यक्ति घर-घर गए और इन्होंने आयोजित सभा के लिए लगभग ५० लोगों को इकठ्ठा कर लिया। सभा में यह फैसला किया गया कि गाँव के लिए एक प्रवेश सड़क बनाई जाए। काम शुरू हो गया। इन दोनों व्यक्तियों ने शपथ ली कि गाँव के अन्य लोग भले ही उन्हें सहयोग न दें, वह सड़क अवश्य पूरी करके रहेंगे। वास्तव में गाँव के अन्य लोग तो काम को अधूरा ही छोड़ कर चले गए। लेकिन ये पिता-पुत्र अपनी धुन के पक्के निकले। कड़कती धूप की इन्होंने परवाह नहीं की और जी तोड़ कर काम में जुटे रहे। काम का काफी हिस्सा खुद उन्हीं ने किया। उनकी लगन देखकर औरों में भी काम करने का शौक पैदा हुआ और फिर से लोग काम पर आने लगे। और इस प्रकार वह प्रवेश सड़क थोड़े ही समय में बन कर तैयार हो गई।

गाँवों की बदलती रूपरेखा

कैलाशनाथ काटजू

दिल्ली से २०-३० मील के फासले पर बसे हुए कुछ गाँवों के देखने का सौभाग्य मुझे मिला। इन गाँवों को देखने पर मैं खुशी से फूला नहीं समाया। इन गाँवों ने मुझ में एक नया जोश पैदा कर दिया है और मैंने इन से काफ़ी कुछ सीखा भी है। भारत के गाँवों में बसे हुए इन शानदार स्त्री-पुरुषों से जितना अधिक मैं मिलता हूँ, उतना ही मैं उनके सीधे-सादे आचरण और मुसीबतों का बहादुरी से मुकाबला करने की क्षमता के कारण उन की प्रशंसा करता हूँ और आदर की दृष्टि से देखता हूँ। हम शहरों में रहनेवाले जो अक्सर अपनी दुनिया में मस्त रहते हैं, अपने इन भाइयों पर गर्व कर सकते हैं। मैं अक्सर कहता हूँ कि मैं गाँवों में स्वार्थवश जाता हूँ, वहाँ के लोगों से कुछ सीखने जाता हूँ, ज्ञान अथवा अनुभव के किसी क्षेत्र में उनको कोई महत्वपूर्ण शिक्षा देने नहीं जाता।

हमारे इतिहास में पहली बार हमारे ग्रामवासी अब यह समझने लगे हैं कि स्वराज्य शब्द का उनके लिए क्या अर्थ है और यह महसूस करने के पश्चात् उन्होंने दृढ़ निश्चय कर लिया है कि वे अपना जीवन-स्तर ऊँचा उठाएँगे। आप उन से बात कीजिए वे आप से इस जोश और स्नेहपूर्ण ढंग से बात करेंगे कि—कम से कम मेरा तो यही अनुभव है—आप उनके उल्लास और आशावाद से प्रभावित हुए बिना न रहेंगे।

पंजाब और पश्चिमी उत्तर प्रदेश के ज़िलों के किसान कई प्रकार से देश के अन्य क्षेत्रों के किसानों से अच्छी स्थिति में हैं। ये लोग सख्त मेहनत करते हैं और चुस्त और अनुभवी किसान हैं। इसके अलावा उन में से अधिकतर खुद भूमि-पति हैं, काश्तकार कम हैं। मल्कियत की भावना और उस के फलस्वरूप प्राप्त होने वाली सुरक्षा से आश्चर्यजनक परिणाम निकले हैं। उन के पशु धन का भी उन की समृद्धि में काफी बड़ा हाथ है। आप बंगाल, उड़ीसा या दक्षिण में चले जाएँ, वहाँ के पशु बहुत कम दूध देते हैं—अक्सर दिन भर में एक-दो पौंड। उत्तर प्रदेश की हालत उतनी खराब नहीं है। लेकिन हरियाने के मवेशी लाजवाब हैं और उन्हें देखते ही बनता है। मैं वहाँ के गाँवों में दर्जनों घरों में गया। हर गृहस्थी ने मुझे बताया कि उस की भैंस दिन में २० से २२ पौंड तक दूध देती है। मैंने उनसे पूछा—"तुम इस का क्या करते हो? क्या दूध बेचते हो?" इस प्रश्न के उत्तर में एक स्त्री ने सगर्व कहा—"जी नहीं, यह दूध तो सारे कुटुम्ब में खप जाता है। जो बचता है उस से लस्सी और मक्खन बना लेती हूँ।"

इन गाँवों के लोगों के हृष्ट-पुष्ट होने का कारण यह है कि इनको दूध पर्याप्त मात्रा में पीने को मिलता है। जो गाँव मैंने देखे वे या तो सामुदायिक विकास योजना क्षेत्र में पड़ते थे या विस्तार सेवा क्षेत्र में आते थे। उन की शक्ल इतनी बदल गई थी कि पहचाने नहीं जाते थे। सड़कें और गलियाँ वहाँ पक्की और चौड़ी हैं। मकान मालिकों ने अपने घरों के दोनों तरफ़ के चबूतरों का कुछ भाग गलियाँ बनाने के लिए दे दिया था। हर रोज़ नए कुएँ खोदे जा रहे हैं। हर गाँव का अपना एक पंचायत घर और वाचनालय है। बड़े-बूढ़ों, स्त्रियों और बच्चों के लिए शिक्षा की व्यवस्था है। कई बार तो मेरी यह इच्छा होती है कि सप्ताह में दो-तीन दिन मैं इन गाँवों के खुले वातावरण में जा कर रहूँ और शुद्ध तथा स्वास्थ्यवर्धक वायु का सेवन करूँ।

अगर आप इन गाँवों के वैभव को पूरी तरह अनुभव करना चाहते हैं तो आप पुराने तरीके से अपना बड़प्पन दिखाते हुए उन से न बोलें। वहाँ जा कर आप उन से मिलें-जुलें, अपने को उन्हीं में से एक समझें, उन के घरों में जाएँ, उन को चारपाइयों पर बैठें और उन से बात-चीत करें। आप का व्यवहार ऐसा हो कि वे यह महसूस करने लगें कि उन के घर उन्हीं का एक भाई आया है। तब उन की आँखों में जो चमक होगी और मुख पर जो भाव होंगे और उन का जो आप के प्रति स्नेहपूर्ण व्यवहार होगा उस को देख कर आप अपने को भाग्यशाली समझेंगे।

मैं अक्सर उन से बातचीत करता हूँ और उन से कुछ सीखता हूँ और कई मामलों पर अपने विचार भी व्यक्त करता हूँ। दृष्टान्त के लिए यही बात लीजिए—इन में से कुछ गाँवों में पशुओं की संख्या भी ग्रामवासियों के बराबर थी और रात होने पर गाँववाले इन पशुओं को घरों के आँगन में ही बाँध लेते थे। यह चीज़ बहुत हानिकारक है, विशेष तौर पर बच्चों के लिए। इसलिए मैंने उन को इस बात का सुझाव दिया कि अगर आप अपने घरों से अलग अपने पशुओं को रखने के लिए अलग-अलग स्थान नहीं बना सकते तो सब

मिल कर एक या आवश्यकतानुसार एक से अधिक शैड बनवा लें, जिन में गाँव भर के पशु रखे जाएँ। गाँव के स्त्री-पुरुष (भले ही हम उन्हें अनपढ़ समझें) वास्तव में बहुत चतुर और समझदार होते हैं। आप उन के सामने कोई भी सुझाव रखें जिससे उन को किसी प्रकार का लाभ पहुँचने की सम्भावना है, वे एक दम इसको समझ कर इस पर अमल करना शुरू कर देंगे। मेरा सुझाव भी उनको पसन्द आ गया।

इसी प्रकार मैंने उनके सामने एक और सुझाव रक्खा जो उनको पहले ही की तरह बहुत पसन्द आया। सुझाव था--हर गाँव में एक औद्योगिक क्षेत्र की स्थापना। इस समय हर गाँव के लोग वहाँ की अर्थ-व्यवस्था के अनुकूल कुछ कुटीर-उद्योगों को अपनाते हैं। जुलाहे अपनी झोंपड़ियों में कपड़ा बुनते हैं, लेकिन उनकी दशा बहुत शोचनीय है। उनकी शोचनीय दशा देख कर मुझे सदा दुःख हुआ है। यही हाल तेली, बढ़ई, लोहार और बाकी कारीगरों का है। उन का घर पहले ही छोटा होता है उस में भी काफ़ी जगह औज़ार घेर लेते हैं। मैंने कई बार गाँववालों को यह बात सुझाई है कि अगर सम्भव हो तो गाँव के अन्दर अथवा बाहर एकाध एकड़ भूमि औद्योगिक क्षेत्र के लिए अलग नियत कर दें। इस क्षेत्र के चारों ओर दीवार खड़ी कर दी जाए और गाँव के हर कारीगर को इस चार-दीवारी में काम करने को कहा जाए। कारीगर वहाँ और कारीगरों के साथ अच्छे और स्वस्थ वातावरण में काम करें। अगर कहीं गाँव में बिजली की भी व्यवस्था है--पंजाब के अनेक गाँवों में शीघ्र ही बिजली पहुँचने वाली है--तो इस औद्योगिक क्षेत्र में आवश्यकतानुसार बिजली की भी व्यवस्था की जा सकती है।

दिल्ली के एक गाँव का एक स्वस्थ युवक

बिजली के प्रश्न से सम्बद्ध एक और चीज़ का भी मैं ज़िक्र करना चाहूँगा। जिस गाँव में बिजली हो उस गाँव में आस-पास के उन गाँवों के लिए भी औद्योगिक केन्द्र खोले जाएँ, जिन में बिजली की व्यवस्था न हो। गाँवों के लिए बिजली आवश्यक है, यह तो अब सभी मानते हैं। हमारे कुटीर उद्योगों के लिए बिजली का होना अत्यधिक आवश्यक है। हर राज्य सरकार गाँवों में बिजली ले जाने की पूरी कोशिश कर रही है लेकिन निकट भविष्य में कुछ प्रतिशत गाँवों को छोड़ कर बाकी गाँवों में बिजली ले जाने में बिजली के खम्भों और तारों पर जो खर्चा आएगा, वह इतना अधिक है कि उन गाँवों के लिए असह्य है।

इस लिए मेरा सुझाव यह है कि बिजलीवाले गाँवों की

संख्या भले ही कम हो, पास-पड़ौस के गाँवों को उन गाँवों की बिजली से फायदा उठाने की कोशिश करनी चाहिए। यह इस प्रकार किया जा सकता है कि पास-पड़ौस के गाँव बिजली वाले गाँवों में अपनी आवश्यकता के अनुसार औद्योगिक क्षेत्र खोलें। इन क्षेत्रों में वे अपने कुटीर उद्योग प्रस्थापित करें। उनके कारीगर हर रोज़ सुबह अपने गाँव से उस क्षेत्र में काम करने जाएँ और दिन भर काम करने के बाद शाम को अपने घर वापस लौट आएँ। मैं यह नहीं मानता कि कोई कारीगर अपना गाँव छोड़ कर उस बिजली वाले गाँव में जा बसे। उस कारीगर के लिए अपने बाप-दादा का गाँव छोड़ना अत्याधिक घातक होगा।

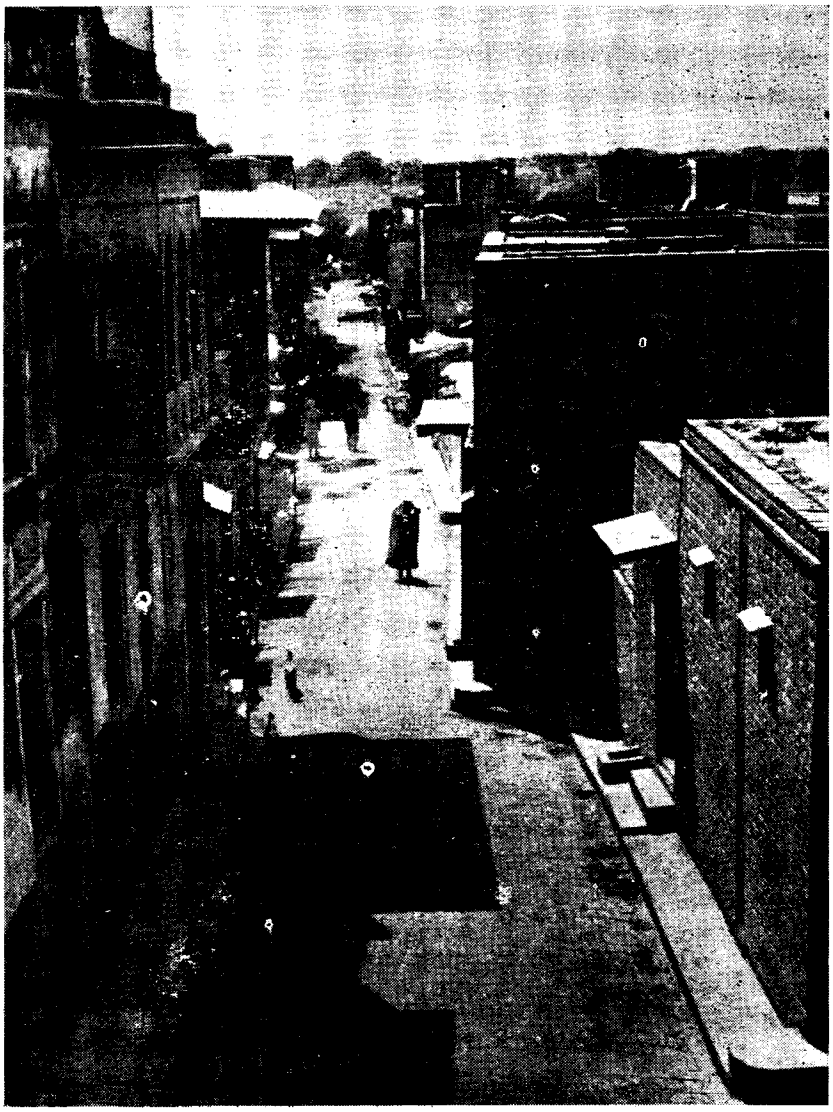

रोहतक राष्ट्रीय विस्तार सेवा के अन्तर्गत एक गाँव की पक्की गली

ज़मींदारी के उन्मूलन के फल-स्वरूप काफ़ी संख्या में गाँवों से ज़मींदारों का निकास हुआ है। काफी शिक्षित नवयुवकों ने अपना गाँव छोड़ दिया है। इस निकास से हमारे गाँवों की अर्थ-व्यवस्था पर बड़ा घातक प्रभाव पड़ा है। मैं चाहता हूँ कि हमारे गाँवों में नई जान फूँक दी जाए। गाँवों के लड़के पढ़-लिख कर शहरों और कस्बों में नौकरियाँ ढूंढ़ने की बजाय वापस अपने गाँव में जा कर आधुनिक ढंग से खेती करके उस में सुधार करें। बड़े पैमाने पर गाँवों में बिजली पहुँचेगी ही, लेकिन जब तक ऐसा नहीं होता, बिजली वाले गाँव में आसपास के गाँव के कारीगर अपने लिए औद्योगिक क्षेत्र बना लें—इससे उनको बेहद लाभ होगा। इससे एक लाभ और भी होगा। बिजली वाले गाँव में बिजली की खपत और माँग बढ़ जाएगी। इसके फलवरूप बिजली सस्ती हो जाएगी।

अब सहकारी खेती को लीजिए। जब भी मुझे सभाओं आदि में गाँव वालों से बात करने का मौका मिला है, तो मैं सहकारी खेती के फायदों का ज़िक्र अवश्य करता हूँ। गाँव के १०-२० किसान मिल कर अपनी भूमि को १००-२०० एकड़ के टुकड़ों में बाँट लें और इन टुकड़ों को आधुनिक ढंग से खेती करें—अच्छे औज़ार इस्तेमाल करें, अच्छी खाद और उर्वरक इस्तेमाल करें। इस का नतीजा होगा उत्पादन में अत्यधिक वृद्धि। एक गाँव वालों के सामने मैंने पहले यह सुझाव रखा था। मैं हाल ही में वहाँ फिर गया। इस बार गाँव वालों ने मुझे सगर्व यह बात बताई कि वहाँ के ११ किसानों ने मिल कर एक सहकारी कृषि समिति बनाई है। उन किसानों ने १५० एकड़ भूमि इकट्ठी कर ली थी और उसकी वैज्ञानिक ढंग से खेती करने की व्यवस्था की गई थी। उस कार्य पर काम करने वाले लोगों को मज़दूरी किस प्रकार दी जाएगी, इस बात का भी पूरा फैसला कर लिया गया था। यह आधुनिक ढंग की एक अच्छी फार्म बन चुकी है। इस

फार्म को देखने के बाद जहाँ भी मैं गया मैंने लोगों को इस फार्म को देखने को राय दी।

अन्त में मैं उपभोक्ता सहकारी स्टोर का ज़िक्र करूँगा। एक गाँव वालों ने मुझे बताया कि उन्होंने ऐसा सहकारी स्टोर शुरू किया था जो अच्छी तरह चल रहा था। उन लोगों ने ७५ रुपए प्रति मास पर एक मैनेजर भी रखा था। मैंने उन से कहा कि अगर आप को अधिक लाभ न हुआ तो आप की समिति एक हज़ार रुपए प्रति वर्ष का खर्चा नहीं उठा सकेगी। मैंने उनके सामने मध्य प्रदेश का दृष्टान्त रखा जहाँ समिति के सदस्य ही आपस में मिल कर अवैतनिक रूप से स्टोर का काम चलाते थे। मान लीजिए समिति के १०० सदस्य हैं। इन सौ सदस्यों को ४-४ के २५ दलों में बाँट दीजिए। अब स्टोर को एक-एक सप्ताह के लिए एक दल के सुपुर्द कर दीजिए--चार व्यक्तियों का यह दल दिन में दो घंटे काम कर के बगैर असुविधा के सप्ताह भर इस स्टोर को चला सकता है। इस प्रकार हर दल को साल में सिर्फ दो बार ही स्टोर चलाने का काम सौंपा जाएगा और तनख्वाह पर एक धेला भी खर्च किए बिना स्टोर चलता रहेगा। गाँव वालों को यह सुझाव बहुत पसन्द आया और उन्होंने मुझे इस पर अमल करने का आश्वासन दिया।

गाँवों में डाक्टरी सुविधाओं का भी अत्यधिक अभाव है। गाँववालों ने मुझ से इस बात की शिकायत भी की। उन्होंने कहा कि इलाज करवाने के लिए उन्हें पास के कस्बे में जाना पड़ता था जो वहाँ से १०-१२ मील के फासले पर था। दवाइयों के बक्सों द्वारा इस मुश्किल को काफ़ी कम किया जा सकता है। इन बक्सों में कुछ प्रचलित बीमारियों की खास-खास दवाइयाँ होती हैं। यह बक्स किसी कार्यकर्त्ता जैसे स्कूल मास्टर के पास रहता है। यह व्यक्ति मरीज़ों की बीमारी देख कर उन को दवाई देता है। दवाइयों के बक्स के साथ ही सीलबन्द दान-पात्र रखा जा सकता है जिस में लोग अपनी श्रद्धानुसार आना-दुअन्नी डाल सकते हैं। इस तरह जब बक्स खाली हो जाएगा तो उस में दोबारा दवाइयाँ भरने के लिए दो-चार रुपए जमा हो जाएँगे। परन्तु इस समस्या का सही और पूरा हल तो डाक्टरों की सहायता से ही हो सकता है।

मैं भारतीय डाक्टरों की निस्स्वार्थ भावना का प्रशंसक हूँ। हम इस बात का अन्दाज़ा ही नहीं लगा सकते कि उन में से हर एक का कितना समय अपने गरीब मरीज़ों की मुफ्त चिकित्सा करने में बीतता है। दिल्ली के कई बड़े डाक्टरों को मैं जानता हूँ--ये लोग हर रोज़ दिल्ली के विभिन्न अस्पतालों में अवैतनिक सेवा करते हैं। गाँवों में डाक्टरी सुविधा के अभाव को देख कर खास तौर पर यह देख कर कि गाँव के बच्चों को डाक्टरी सहायता पहुँचाने वाला कोई नहीं है, मुझे अक्सर ऐसा ख्याल आया है कि हमारे निजी और सरकारी डाक्टर ज़िला अधिकारियों से मिल कर गाँवों की रोग-पीड़ित जनता को सहायता पहुँचाने की कोशिश करें तो कितना अच्छा हो।

●

भूमि का मसला तो हल होकर ही रहेगा। दूसरे देशों में यह दूसरे तरीकों से हल हुआ है, परन्तु उनसे कोई लाभ नहीं हुआ। इसलिए अगर हम भी वे ही तरीके आज़माएँगे, तो उसमें हमारी कोई विशेषता नहीं है और न उससे हम सुखी ही होंगे। परन्तु अगर यह मसला अपने ढंग से हल करेंगे, तो हम दुनिया को बचा सकेंगे। इसलिए मेरी सारी कोशिश यही है कि हमारे सारे मसले आत्मा के तरीके से हल हों।

—विनोबा भावे

राधेलाल निस्सन्तान क्यों है ?

सावित्री देवी वर्मा

राधेलाल के घर सात बच्चे हुए, पर उनका कहना है कि उसमें से केवल फकीरचन्द ही लाख मनौतियाँ करके, उन्हें गोद खिलाना नसीब हुआ। उसकी दादी ने जब वह सवा साल का हुआ उसे फकीर बना दिया था। उसके दोनों कान छिदवा दिए। पाँव में लोहे की कड़ी पहना दी। उनका विश्वास था कि यह सब करने से वह बच जाएगा, पर पांच वर्ष का होकर वह भी चल बसा। भला क्यों ? इसका असली कारण कुछ और ही है : राधेलाल के घर के सभी लोग बड़ दकियानूसी विचारों के हैं। छूआछूत और अंध-विश्वास के पक्के पुजारी हैं। राधेलाल जब १४ वर्ष का था उसका ब्याह कर दिया गया। राधेलाल की बहू की उम्र उस समय दस वर्ष की थी। जब उसकी उम्र १३ वर्ष की हुई उसका गौना कर दिया गया जबकि उसकी उम्र की लड़कियाँ स्कूलों में पढ़ने जाती थीं—वह घूंघट मार कर कोने में सिर झुकाये बैठी रहती थी। ससुराल जाने के एक साल बाद ही वह गर्भवती हो गई। भला सोचिये, १४ वर्ष की लड़की का न तो शारीरिक और न ही मानसिक विकास पूर्णरूप से हो पाता है, ऐसी हालत में यदि उस पर बच्चे को जन्म देने का भार डाल दिया जाए तो भला मां बच्चे की कहाँ खैर है। वही हुआ जिसका डर था। सातवें महीने लक्ष्मी (राधे की बहू) को गर्भपात हो गया। वह मरते-मरते बची। साल भर के अन्दर फिर बच्चा होने वाला हो गया। बच्चा हुआ पर सौरी में ही मर गया। इसके बाद तीसरे वर्ष फिर लक्ष्मी गर्भवती हुई। अब की बार लड़की हुई। सास को बड़ी निराशा हुई। उसने सौरी में बहू की कोई देखभाल नहीं की। सवा महीने की होते-होते लड़की निमोनिये से मर गई। अभी लक्ष्मी की उम्र १७ वर्ष की होगी और वह तीन बच्चों को जन्म भी दे चुकी थी। उसकी तन्दुरुस्ती दिन पर दिन गिरती गई। डाक्टरी इलाज में उसके सास ससुर विश्वास नहीं करते थे। प्रसूति के बाद ही उसे बुखार आने लगा था। बच्ची के मर जाने से उसका मन भी बड़ा उदास रहने लगा था। धीरे-धीरे बुखार ने उसे खोखला कर दिया और उसे तपेदिक हो गई। दो साल बीमार रहकर वह मर गई।

पैसे वालों को काहे की कमी; चार महीने के अन्दर ही राधेलाल का दूसरा ब्याह हो गया। दूसरी पत्नी का नाम था शान्ति। इसकी उम्र १५ वर्ष की थी। ब्याह के एक साल बाद शान्ति को भी बच्चा होने को हुआ। सास ने सोचा शहर के घर में सौत की आत्मा सताएगी इस लिए वह शान्ति को प्रसव के लिए गाँव ले गई। वहाँ गाँव की गँवार दाई बच्चा जनाने आई। जन्म के समय नाड़ बच्चे के गले में फँसी थी—ध्यान न देने से बच्चा दम घुट जाने से मर गया। दाई ने कह दिया बच्चा मरा हुआ, नीला ही पैदा हुआ था। राधे की मां ने इसे भी भूत-प्रेत बाधा ही समझी। शान्ति को दूसरा बच्चा तो ठीक हो गया पर दाँतों के समय उसकी संभाल ठीक न होने के कारण सवा साल का होकर वह मर गया। तीसरी बार शान्ति के एक लड़की हुई। जब वह दो वर्ष की थी घर के मुंडेर पर से नीचे गली में गिर पड़ी और उसने तुरन्त प्राण छोड़ दिये। जब शान्ति के चौथा बच्चा होने को हुआ तो शान्ति की सेहत बहुत कमज़ोर हो गई। उसने अपने भाई को चिट्ठी लिखी। वे आकर उसे अपने साथ ले गए। वहाँ शान्ति का पूरा इलाज करवाया। केलशियम के इंजेक्शन लगवाए। उसको हर रोज़ नियमित सही-पौष्टिक भोजन खाने को दिया। अच्छी सार-संभाल होने पर शान्ति का स्वास्थ्य संभल गया। शान्ति की भाभी बड़ी समझदार थी। उसने बच्चे के लिए पहले से सब ज़रूरत की चीज़ें जुटा लीं। छोटे-छोटे कपड़े, बिछौना आदि सभी तैयार कर लिए। पास के ज़नाने अस्पताल में शान्ति के लिए जगह ठीक कर दी। पूरे दिन पर शान्ति के एक अच्छा तन्दुरुस्त लड़का हुआ। सब को बड़ी खुशी हुई। खबर पाकर शान्ति की सास आई। अस्पताल का तौर-तरीका उसे बिल्कुल पसन्द नहीं आया। वह शान्ति की भाभीजी से बोली—"ए बहूजी, यह तुमने भला क्या किया। घर बार होते हुए, यह लावारिसों की तरह अस्पताल में काहे को शान्ति की जचकी करवाई। यहाँ से निकल कर कोई धर्म थोड़े न बचेगा। इसी खटिया पर न जाने कितनी जच्चा मरी होंगी। अगर हमारी बहू को किसी का भूत लिपट गया तो कौन ज़िम्मेदार है ?" भाभी बोली—"माता जी ! भूत का तो भ्रम है। यह तो बीमारी व कमज़ोरी से जच्चाएँ मर जाती हैं। छुआछूत में क्या रखा है; सफाई रखनी चाहिए।" गाल पर हाथ रखकर सास बोली—"ले, बहू तुमने तो गज़ब कर दिया। पढ़-लिख कर के तू तो पूरी क्रिस्तान बन गई। और मैं यह पूछूँ हूँ कि तुमने जचकी में ही लल्ला को नए कपड़े क्यों पहना दिए।

हमारे यहाँ तो दस दिन तक बच्चे को चीथड़ों में लपेट कर रखा जाता है। हम तो अपने लल्ला को साल भर तक दूसरे से माँग कर कपड़ा पहनाएँगे। तुमने तो सारा बिगाड़ कर बड़ा खराब काम किया।"

शान्ति की भाभी मांजी की बातें सुन कर हैरान थी। बड़ी मुश्किलों से मिन्नत-खुशामद करवा कर शान्ति को सास ने सवा महीने के लिए पीहर छोड़ा। इस बीच में भाभी ने शान्ति को बच्चे को नहलाना धुलाना, दूध पिलाना, बच्चे का हर काम समय पर करना सिखा दिया। सवा महीने में बच्चा अच्छा संभल गया। उसके बाद उसे ससुराल जाना ही पड़ा। सास लाड के मारे बच्चे को दिन भर गोदी में लेकर बैठी रहती। कुछ ही दिनों में बच्चे को गोदी में रहने की आदत पड़ गई। जब वह थपक-थपक कर सो जाता तब सास अपने दुशाले के अन्दर लपेट कर उसे गोदी में ही सुला लेती। मुँह ढक कर सुलाने से बच्चे को साफ हवा न मिलती। इससे जब भी वह खुली हवा में जाता उसे जल्द जुकाम हो जाता। शान्ति कहती कि बच्चे को समय पर दूध पिलाऊँगी, पर बच्चा जब भी रोता, सास समझती कि भूखा रो रहा है—वह उसे दूध पिलाने पर ज़ोर देती। चुप कराने के लिए कभी-कभी अपना सूखा स्तन भी उसके मुँह में दे दिया करती। धीरे-धीरे बच्चा बीमार रहने लगा। उसका गुलाब-सा खिला हुआ चेहरा मुर्झा गया। शान्ति की सास टोपी तो अपने पोते के हमेशा कस देती पर धड़ व पाँव से उसे नंगा रखा करती। जब बच्चा सवा साल का हुआ तो सास ने एक ढोंग और रचा। उसे एक फकीर की गोदी में डाल दिया और फिर ग्यारह रुपए व सीधा देकर फकीर से बच्चा मानों मोल ले लिया। उसका विचार था कि इस प्रकार दूसरे को दे देने से बच्चा बच जाएगा। इसी लिए बच्चे का नाम फकीरचन्द रखा। फकीरचन्द के दोनों कान छेद दिए गए। उसके पांव में लोहे की एक कड़ी पहना दी गई। माथे पर उसके दिन भर काले टिके पुते रहते। इस प्रकार उसका हुलिया बिगड़ा रहता। फकीरचन्द के जब एक दो दांत निकले, दादी लाड़ से उसे लड्डू खिला देती। उसकी छोटी बुआ खाना खाने बैठती तो अनापशनाप उसके मुँह में ठूस देती। धीरे-धीरे फकीरचन्द ने दूध पीना छोड़ दिया और चटपटी चीज़ों का चटोरा बन गया। इसका नतीजा यह हुआ कि उसका पेट निकल आया। तिल्ली बढ़ गई। बच्चे की हालत बहुत कमज़ोर हो गई। शान्ति ने दुखी होकर अपने पति से कहा कि मुझे कुछ दिन के लिए पीहर भेज दो। लल्ला हवा पानी बदल जाने से वहाँ जाकर ठीक हो जाएगा। शान्ति के भाई भावज ने जब बच्चे की यह हालत देखी तो हैरान रह गए। डाक्टर को दिखाया, इलाज शुरू हुआ। शुरू-शुरू में तो लल्ला ने बहुत रोना-धोना शुरू किया क्योंकि उसे तो दादी के संग चिपटे रहकर रें रें करने की आदत थी। धीरे-धीरे लल्ला की आदत व सेहत सुधरने लगी—मुँह पर रौनक आ गई। बच्चा पनप गया। मुश्किल से तीन महीने बीत पाए थे कि ससुराल से सेठ जी लेने आ गए। शान्ति डर रही थी कि ससुराल जाकर बच्चे की फिर वही पुरानी आदतें पड़ जाएँगी। सास के डर के मारे वह कुछ कह नहीं सकती। माँ को कुछ रोकना टोकना सेठ जी के लिए भी निर्लज्जता मानी जाती। उनकी माँ का तो बस एक ही जवाब था कि क्या हमने बच्चे पाले नहीं ? आजकल की छोकरियों को बस नखरों के सिवाय और आता ही क्या है ? शान्ति की माँ ने सेठजी को समझाते हुए कहा—"सेठ जी, देखिए यहाँ पर लल्ला की सेहत कितनी अच्छी हो गई है। आपसे निवेदन है कि बच्चे के खान-पान में परहेज़ रखें। उसके हर एक काम का समय बंधा रहने दें और जो कुछ परहेज़ी खाना उसे यहाँ दिया जाता था वही चालू रखा जाए। लल्ला को जो तो खिलाते रहने से उसकी सेहत बिगड़ गई है। इस समय उसके दाँत निकल रहे हैं अगर बेपरवाही हो गई तो वह फिर झटका खा जाएगा।" सेठजी हूँ हूँ करके सब बात सुनते रहे। घर आकर वह अपनी पत्नी से बोले—"तुम्हारी माँ ने क्या हमें गँवार समझा हुआ है। उनके यहाँ क्या कोई सोने के कौर लल्ला को खिलाया जाता था जो हम नहीं खिला पाएँगे ? हमारी माँ क्या बेवकूफ है ?" शान्ति को तो काटो खून नहीं ऐसा हाल हो गया। सास ने लल्ला को गोदी में लेकर कहा—"हाय हाय, दुबला हो गया, ननसाल जाकर मेरा मुन्ना। वहाँ दूध भी मिलता था पीने को कि नहीं।" बस वह कड़ा हुआ भैंस का दूध कटोरे में भर कर ले आई और मुन्ने को गोदी में लिटाकर ज़बरदस्ती चम्मच से गटक गटक निगलवा दिया। दो चार दिन बाद ही बच्चा फिर सुस्त पड़ गया। बच्चे की सार-संभाल ठीक से न होने के कारण बच्चे का स्वास्थ्य निखरने नहीं पाया। इसी प्रकार चार साल बीत गए। फकीरचन्द अपनी आयु के बच्चों से बहुत कमज़ोर लगता था। हर साल कोई न कोई बीमारी उसे घर दबाती थी। खसरा, कुत्ता खांसी, पेचिश, सभी हो चुके थे। पिछले साल उसे बड़ी माता निकल आई थी। उसमें फकीरचन्द की एक आँख चली गई। अपने बेटे की ऐसी दुर्दशा देखकर शान्ति का बुरा हाल था। वह इस विषय में अपने पति को भी दोषी सम-

झती थी। इसी कारण पति पत्नी में कुछ मन-मुटाव भी रहता था। सेठ साहब चरित्र से भी कमज़ोर थे। अतएव उन्हें खून की बीमारी भी हो गई थी। और वह अपनी पत्नी से बचते रहते थे। पाँचवें साल लगते ही फकीरचन्द को मोतीझरा हो गया। बीमारी ने उसे और भी कमज़ोर कर दिया। वैद्य जी का इलाज चालू था। बुखार कम हो रहा था। लल्ला का चटपटी चीज़ें खाने का मन होता था। एक दिन ममता में आकर सास ने थोड़ी सी खिचड़ी दे दी—दूसरे दिन एक दो कौर रोटी भी दे दी। बस तीसरे दिन बुखार ज़ोर से चढ़ आया और उसी में २१ दिन बीमार रह कर फकीरचन्द भी चलता बना। पुत्र के मर जाने से शान्ति का बुरा हाल था। रो-रो कर उसने अपनी काया खराब कर ली। उसका मन मुरझा गया। सारी उम्र वह बच्चों के लिए कलपती मर गई। पति भी उसका बीमार रहने लगा था। फकीरचन्द के बाद तो उनके कोई और बच्चा ही नहीं हुआ।

इस प्रकार सात बच्चों के बाप होकर भी सेठ राधेलाल आज निस्सन्तान और दुखी हैं। बच्चे उनकी अपनी भूल और ठीक से सार-संभाल न होने के कारण मर गए यह बात अभी तक उनकी समझ में नहीं आई। वह इसे भूत-प्रेत बाधा समझते हैं। शान्ति अपने दुर्भाग्य पर आँसू बहाती है—"हाय! चार-चार बच्चों को जन्म देकर भी आज मैं निपूती हूँ। मेरी भाभी के तीन बच्चे हुए और तीनों मुंह के आगे हैं।"

आज शान्ति की तरह कई माताएँ अपनी सन्तान खोकर दुखी हैं। हमारे देश में बच्चे होते हैं पर उसमें से कुछ तो जन्म के कुछ दिन बाद ही मर जाते हैं। ४० प्रतिशत दो साल के अन्दर ही दाँतों के समय कमज़ोर होकर, बीमारी की लपेट में आकर खत्म हो जाते हैं और दस प्रतिशत के करीब पाँच साल की आयु तक पहुँचते-पहुँचते खत्म हो जाते हैं। इस प्रकार आध से अधिक बच्चे अपनी पाँच साल की आयु के अन्दर ही रेंग-रेंग कर मर खप जाते हैं। अगर नीचे लिखी बातों का ध्यान रखा जाए तो माँ-बाप और बच्चे दोनों का कल्याण हो--

(१) लड़के लड़कियों का ब्याह सयानी उम्र में करना चाहिए। लड़की की उम्र कम से कम १६ वर्ष और लड़के की बीस वर्ष हो। शादी से पहले हर एक स्त्री पुरुष में बच्चों की ज़िम्मेदारी संभालने की योग्यता होनी चाहिए।

(२) स्वस्थ माँ-बाप ही स्वस्थ सन्तान उत्पन्न कर सकते हैं। अगर पति या पत्नी में से एक भी रोगी है तो बच्चे तन्दुरुस्त पैदा नहीं हो सकते। (३) स्त्री जब गर्भवती हो उसकी सार-संभाल भली प्रकार की जाए। उसे तन-मन से सुखी रखा जाए। उसे ऐसा भोजन दिया जाए जो कि जल्द हज़म हो जाए। दूसरे, चौथे महीने उसे किसी अनुभवी दाई या लेडी डाक्टर को दिखाते रहना चाहिए। उसके खून या पेशाब की जाँच करवाएँ। यदि शरीर में कैलसियम व आयरन की कमी होगी तो उसका मुँह पीला पड़ जाएगा और हड्डियाँ कमज़ोर पड़ जाएँगी जिससे बच्चा तो कमजोर होगा ही साथ ही प्रसूति के बाद जच्चा को कई रोग लग जाएँगे। मुँह पर झुइयाँ पड़ जाएँगी, बाल झड़ने लगेंगे। यह कमज़ोरी बच्चे को दूध पिलाते समय और बढ़ जाएगी। (४) आपके घर में जब नया बच्चा आने वाला हो उसके स्वागत की तैयारी करें। छोटे-छोटे कपड़े, पालना, बिस्तरा पहले से तैयार रखें। बच्चों को चीथड़ों में लपेटना भूल है। (५) जचकी के लिए पहले से प्रबंध कर लें ताकि ऐन समय पर घबरा कर दौड़ धूप न करनी पड़े। जच्चा और बच्चा को साफ़ कमरे में रखें। साफ हवा और धूप उन दोनों के लिए बहुत ज़रूरी हैं। कमरे को बंद करके अंगीठी जलाना भारी भूल है। पूरी सफ़ाई रखें। जच्चा को हलका पाचक तथा पौष्टिक भोजन दें। (६) बच्चे का हर एक काम समय पर करें। इससे बालपन से ही बच्चे को अच्छी आदत पड़ेगी और माँ को भी चैन रहेगा। (७) जब तक बच्चा छोटा है उसे लेकर मेले ठेले, सिनेमा, ब्याह-शादियों में मत जाएँ। ऐसी जगह जाकर बच्चे की बड़ी बेपरवाही होती है और वह छत की बीमारियों के शिकार हो जाते हैं। (८) बच्चा क्यों रोता है इसके कारण का पता लगाएँ। यह नहीं कि उसके मुँह में स्तन देकर या हऊआ, जूजू का डर बता कर चुप कराएँ। (९) बीमार बच्चे की देखभाल ठीक से करें। दवाई और पथ्य देने में आलस मत करें। (१०) बच्चे की आयु, हाज़मे तथा सेहत का ध्यान रखकर भोजन दें। जो भोजन बड़े खाते हैं, वह सभी चीज़े बच्चे के लिए माफिक नहीं होती। (११) भूत-प्रेत जादू टोने और झाड़ फूंक के फेर में पड़कर बच्चे की बीमारी मत बढ़ा लें। बीमारी में बच्चे की साँस चलने लगती है, उसे झटके भी आने लगते हैं। तेज़ बुखार में वह आँख मींच कर पड़ा रहता है। पेट खराब होने पर उसे दूध हज़म नहीं होता। इन सब लक्षणों को नासमझ स्त्रियाँ किसी की नज़र लगना मान बैठती हैं। इसी ग़लती में बच्चा बेइलाज ही मर जाता है। (१२) बच्चों को गली में या कुएँ तालाब अथवा छत के किनारे खेलने मत छोड़ें। आग और तेज़ हथियार से भी दूर रखें। नहीं तो दुर्घटना होने का डर रहता है।

श्रीनिकेतन के उद्देश्य

बृजमोहन दाधीच

गाँवों के सर्वतोमुखी विकास के लिए गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने १९२२ में ग्राम पुनर्निर्माण की संस्था श्रीनिकेतन का श्रीगणेश किया था। अभी भी वह संस्था पूर्ववत चल रही है। उसके लक्ष्य, सिद्धान्त एवं कार्य आज सारे भारत की सामुदायिक विकास-योजनाओं एवं विस्तार सेवाओं के आधारभूत स्तंभ बन गए हैं।

इस संस्था का उद्देश्य गाँवों की भौतिक, सांस्कृतिक एव आर्थिक स्थिति में सुधार करने के लिए ग्रामवासियों को आधुनिक उपकरणों का उचित उपयोग करने योग्य बनाना तथा उन्हें अपने देश की सांस्कृतिक परम्पराओं से सम्बन्धित जानकारी देकर पुनः स्वावलम्बी, स्वाभिमानी, एवं पूर्ण जीवन बिताने योग्य बनाना है।

इस संस्था के निम्नलिखित लक्ष्य हैं--

(१) किसानों की जटिल समस्याओं को हल करने में योग देकर उनके कल्याण एवं जीवन के विभिन्न पहलुओं में यथार्थ रुचि लेकर उनका स्नेह एवं साहचर्य प्राप्त करना।

(२) गाँव व खेत की समस्याएँ अध्ययन एवं विवेचन के लिए विद्वानों तक पहुँचाना तथा उनको हल करने के लिए खेती के नए-नए प्रयोग करना।

श्रीनिकेतन का विशाल भवन

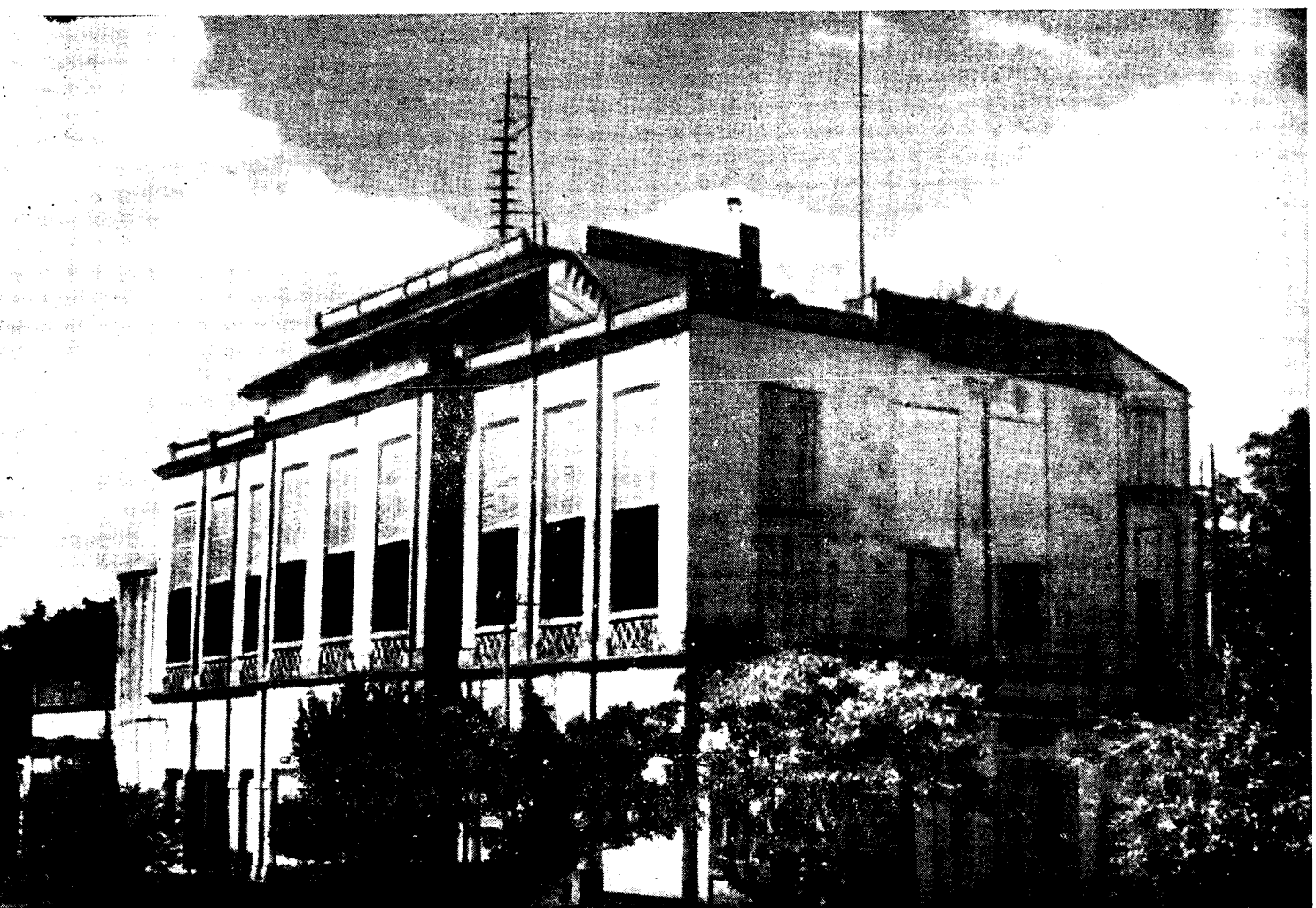

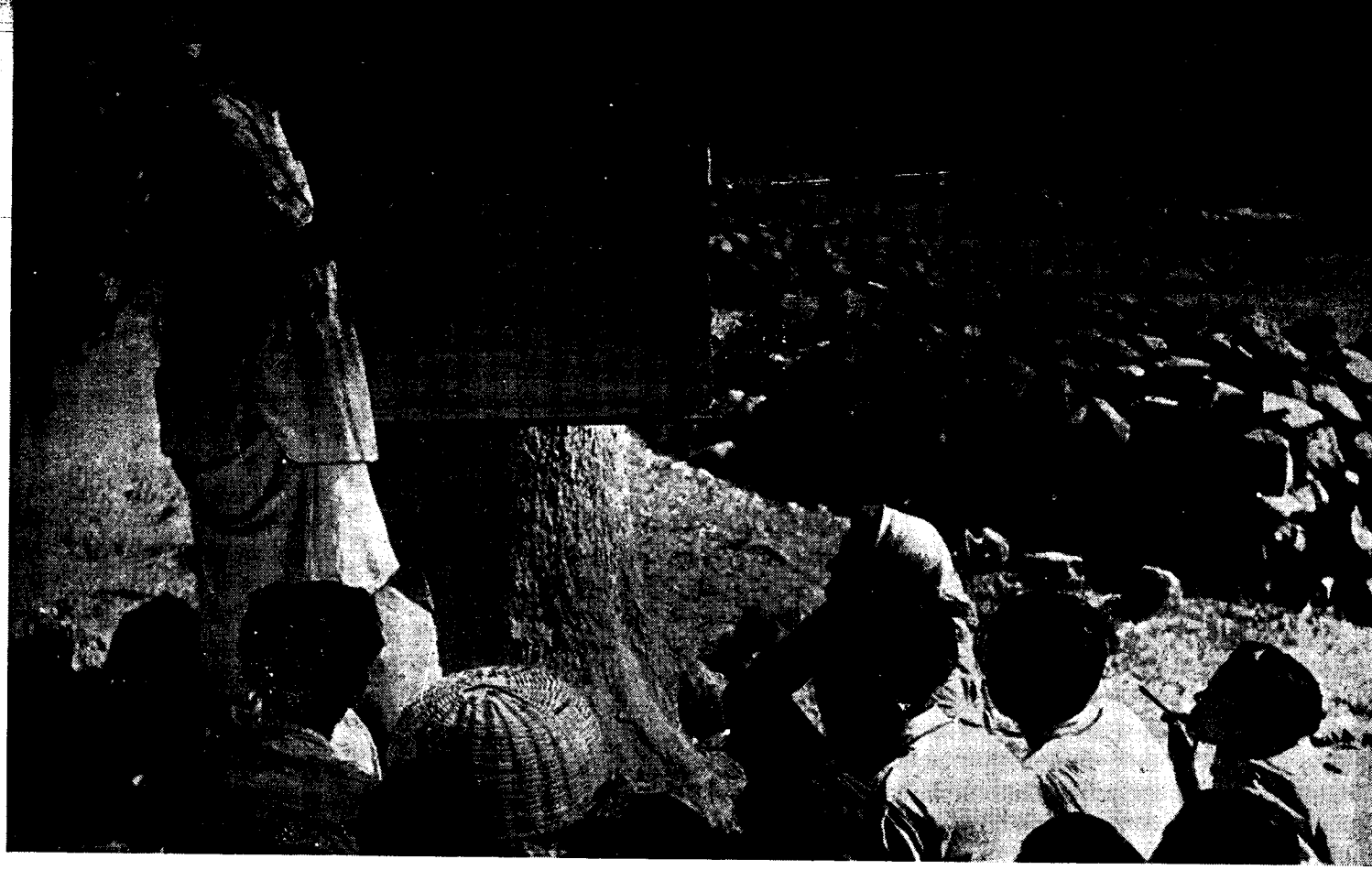

श्रीनिकेतन में प्रौढ़ शिक्षा की कक्षा

(३) अनुभव, अध्ययन एवं प्रयोगों द्वारा प्राप्त ज्ञान गाँवों तक पहुँचाना ताकि ग्रामवासी अपने स्वास्थ्य एव सफाई में सुधार करें, साधनों की वृद्धि कर सुख प्राप्त करें, क्रय-विक्रय का ढंग सुधार कर अधिकतम लाभ उठाएँ, अनाज व सब्ज़ी उत्पादन तथा पशु-पालन में उन्नत विधियाँ अपनाएँ, कला एवं दस्तकारी में रुचि लेकर समय का सदुपयोग करें तथा सामूहिक, सहकारी, परस्पर सहायक, संयुक्त प्रयत्नों का महत्व जान सकें ।

श्री निकेतन के सेवा के सिद्धान्त निम्नलिखित हैं--

(१) गाँववालों को उतनी ही सहायता दी जाए जितनी आत्म-सहायता के लिए आवश्यक हो । उनम 'अपनी सहायता आप' करने की भावना पैदा करना ज़रूरी है ।

(२) सेवाएँ श्रद्धा एवं आदर के साथ समर्पित की जाएँ।

(३) सेवा करने से पूर्व गाँववालों से सीख लो, उनकी आवश्यकता एव इच्छाओं को जानो, अपनी बातें एकदम मत थोपो अर्थात सेवा करने के पूर्व प्रशिक्षण प्राप्त करो।

(४) मुफ्त दान देकर दीन का स्वाभिमान एवं आत्म-गौरव मत छीनो, श्रम या सेवा के फलस्वरूप सहायता दो ताकि दासत्व के स्थान पर स्वामित्व जागे ।

(५) सर्वांगीण विकास की भावना भरो न कि एकांगी विकास की । कृषि, पशुपालन, सहकारिता, शिक्षा, सेवा, मनोरंजन, परिवार नियोजन, सभी साथ-साथ चलें । पूर्ण व्यक्तित्व के विकास का यत्न हो, स्वाभिमानी, स्वावलम्बी ,परिश्रमी, सेवाभावी, स्वस्थ, मस्त, आनन्दमय मानव ही लक्ष्य हो न कि जड़ संस्थाएँ ।

प्रगति के पथ पर

राष्ट्रीय विस्तार सेवा का विस्तार

सामुदायिक विकास-योजना प्रशासन ने चालू वर्ष में २६६ राष्ट्रीय विस्तार सेवा खण्ड और खोलने का निश्चय किया है। ये खण्ड उन १७२ खण्डों के अलावा हैं जो पहले खोले गए थे। १९५६-५७ में और जितने खण्ड खुलने हैं उनके बारे में अगले दिसम्बर में निर्णय किया जाएगा।

देश के १९ राज्यों में नए खण्डों का वितरण किया गया है जो इस प्रकार हैं : आन्ध्र—२०, असम—११, बिहार—२८, मद्रास—२३, उड़ीसा—२०, मध्य प्रदेश—१५, पंजाब—६, पश्चिम बंगाल—२०, उत्तर प्रदेश—८०, हैदराबाद—७, मध्य भारत—६, पटियाला—१, मैसूर—६, तिरुवांकुर-कोचीन—८, भोपाल—२, कच्छ—१, विंध्य प्रदेश—२, और जम्मू—कश्मीर १०। बम्बई, राजस्थान, हिमाचल प्रदेश, मनीपुर और त्रिपुरा में कितने खण्ड स्थापित किए जाएँगे, यह बात विचाराधीन है। इस सम्बन्ध में बाद में घोषणा की जाएगी।

इन खण्डों पर २ अक्तूबर १९५६ को काम शुरू होगा। लेकिन राज्य सरकारों को शीघ्र ही प्राथमिक कार्य शुरू कर देने का अधिकार दे दिया गया है।

सामुदायिक विकास-योजना प्रशासन ने राज्य सरकारों को एक पत्र लिखा है जिसमें यह सुझाव दिया गया है कि सेवा खण्डों पर काम शुरू करने से पहले इस बात का पता चला लिया जाए कि उनके लिए आवश्यक संख्या में प्रशिक्षित कर्मचारी मिलेंगे या नहीं। अगर ये आवश्यक संख्या में उपलब्ध न हों तो शुरू में उपलब्ध कर्मचारियों के अनुपात में ही खण्ड खोले जाएँ।

१० जुलाई, १९५६ तक सामुदायिक विकास खण्डों की और राष्ट्रीय विस्तार सेवा खण्डों की कुल संख्या ११६० थी। इनके अन्तर्गत १ लाख ५७ हजार ३४७ गाँव थे जिनकी आबादी ८ करोड़ ८८ लाख थी।

जनता के काम में सरकार का सहयोग

सामुदायिक विकास कार्यक्रम में जन-सहयोग शुरू से ही इस कार्यक्रम की मुख्य विशेषता रही है। पर अब इस कार्यक्रम को 'सरकारी काम में जन-सहयोग' के बजाय 'जनता के काम में सरकार का सहयोग' का रूप दिया जा रहा है। इस परिवर्तन के लिए गाँवों में ऐसे संगठनों का निर्माण करना जरूरी है जो कार्यक्रम की अवधि समाप्त होने से पहले ही इस काम की जिम्मेदारी संभालने योग्य बन सकें।

स्थानीय काम-काज को ठीक तरह चलाने के लिए दूसरी योजना में पंचायतों को पुनर्जीवित करने की आवश्यकता पर बल दिया गया है। योजना में कहा गया है कि हमारा उद्देश्य प्रत्येक गाँव में, और विशेषकर राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक योजना-क्षेत्रों के हर गाँव में एक-एक पंचायत की स्थापना करना होना चाहिए। पहली योजना की अवधि में गाँव पंचायतों की संख्या ८३,०८७ से बढ़कर १,१७,५९३ हो गई थी। दूसरी योजना के अन्त तक पंचायतों की संख्या २,४४,५६४ हो जाने की आशा है।

सामुदायिक योजना-क्षत्रों में पंचायतों को कार्यक्रम बनान और उन्हें पूरा करने के लिए २,००० रुपए तक देन की सिफारिश की गई है। इसके अलावा अधिकतर राज्यों में अपने क्षेत्रों के लिए योजनाएँ बनाने में पंचायतों का काफी हाथ रहता है। पंचायतों द्वारा तैयार की गई योजनाओं पर खण्ड सलाहकार समिति की सहमति मिल जाने पर उन्हें सामुदायिक खण्ड के विकास कार्यक्रम में सम्मिलित कर लिया जाता है।

विकास कार्यों म जनसहयोग प्राप्त करने के लिए जन संगठनों के बनाने के अतिरिक्त विकास-योजनाए बनाने और उन्हें पूरा करने में गाँवों में तदर्थ संस्थाओं की भी स्थापना की गई है। इस प्रकार की जिन संस्थाओं ने महत्वपूर्ण कार्य किया है, उनमें प्रमुख हैं: गाँव सभा, गाँव संघ, और विकास मण्डल। ये संस्थाएँ जनता के सब वर्गों की प्रतिनिधि होती हैं और इन्होंने अपनी उपसमितियों द्वारा स्कूल, सड़कें और कुएँ आदि बनाने में सहायता दी है। शिविर, प्रशिक्षण शिविर और गाँव के प्रधानों की गोष्ठियाँ आदि करने से भी जन सहयोग मिला है। इस तरह योजना-क्षेत्रों में खण्ड सलाहकार समितियों, पंचायतों, स्थानीय सेवा संगठनों और व्यक्तियों की मार्फत सब क्षेत्रों में जन-सहयोग लेने की चेष्टा की जाती है।

सरकार ने १९५५ के अन्त तक सामुदायिक विकास और राष्ट्रीय विस्तार सेवा कार्यक्रमों पर ३८ करोड़ २० लाख रुपए व्यय किए हैं। इसी अवधि में जनता ने भी धन, सामग्री या श्रम के रूप में २१ करोड़ ४० लाख रुपए की सहायता दी है। यह सहायता कुल सरकारी व्यय का ५६ प्रतिशत है। जनता के योगदान का औसत प्रति १,००० व्यक्ति (स्त्री-बच्चों समेत) के पीछे ३,१८५ रुपया बैठता है।

योजनाओं के लिए सामान

सामुदायिक विकास-योजनाओं के अन्तगत चलनेवाली कृषि, पशु-पालन, सिंचाई, भूमि-सुधार, स्वास्थ्य तथा सफाई, समाज शिक्षा, और गृह उद्योग आदि कार्यक्रमों के लिए आधुनिक ढंग के सामान की आवश्यकता है। साथ ही उन सामानों को उपयुक्त स्थानों पर ठीक समय पर पहुँचाने की समस्या भी उतनी ही महत्वपूर्ण है, ताकि योजनाओं में काम करनेवाले मुस्तैदी से अपना काम कर सकें।

देश के उद्योगों को प्रोत्साहन देने के लिए योजनाओं म देसी सामान का उपयोग करने का भरसक प्रयत्न किया जा रहा है। लाखों रुपए के देसी मोटर ठेले, जीप, ट्रेलर, पम्पिग सैट आदि खरीदे जा चुके हैं।

परन्तु जो सामान देश में नहीं बनता, उसे बाहर से मंगाने की व्यवस्था की गई है। ऐसे सामान के लिए अमेरिका ने आर्थिक सहायता दी है। अमेरिका से सामान मंगाने के लिए अब तक लगभग १२७ लाख ७० हज़ार डालर (लगभग साढ़े छः करोड़ रुपए) की सहायता मिल चुकी है। इसमें से लगभग ८६ लाख ६ हज़ार डालर का सामान तो पहुँच चुका है और आशा है कि शेष अगले छः महीने के अन्दर आ जाएगा।

उर्वरक आन्दोलन को बढ़ावा

इस साल धान के १५ लाख एकड़ और गेहू के १० लाख एकड़ क्षेत्र में अन्न का उत्पादन बढ़ाने के लिए अमोनियम सल्फेट छिड़का जाएगा। इस आन्दोलन में लगभग १,७५,००० टन अमोनियम सल्फेट खर्च होने का अनुमान है। कृषि मन्त्री डा० पंजाबराव देशमुख के सभापतित्व में उर्वरक आन्दोलन उपसमिति की बैठक हुई थी उसी में उक्त निर्णय किया गया। बैठक में यह भी निर्णय हुआ कि प्रत्येक राज्य में उस क्षेत्र का भी लक्ष्य निर्धारित कर दिया जाए, जिसमें उर्वरक आन्दोलन चलाया जाएगा। इस आन्दोलन में सुपर फास्फोटिक तथा पोटेशियम उर्वरकों का भी प्रचार किया जाएगा। आशा है कि सामुदायिक विकास-योजनाओं तथा राष्ट्रीय विस्तार खण्डों के कार्यकर्ता इनकी प्राप्ति में सहायता देंगे। इस आन्दोलन को राज्य सरकारें चलाएँगी और जैसा होता आया है, उन्हें उर्वरक केन्द्रीय भण्डार से दिया जाएगा। यह आवश्यक समझा गया कि आजकल जितने क्षेत्र में खेती का जापानी तरीका अपनाया जा रहा है, उसे और अधिक बढ़ाया जाए। इस सिलसिले में यह निर्णय किया गया कि उन ग्राम सेवकों और अन्य ग्राम कार्यकर्त्ताओं को, जो सबसे अधिक भूमि म जापानी तरीके से खेती करवाएँगे तथा अधिकतम क्षेत्र में उर्वरक आन्दोलन चलाएँगे, पुरस्कार दिए जाएँगे।

दूसरी योजना में दुग्धशालाओं का विकास

दूसरी पंचवर्षीय योजना की अवधि में हैदराबाद, आन्ध्र, असम, बिहार, उड़ीसा, पंजाब, उत्तर प्रदेश, राजस्थान, पेप्सू, मध्यप्रदेश और सौराष्ट्र में दुग्ध-चूर्ण इत्यादि पदार्थ तैयार करने के ७ कारखाने तथा देहातों में दूध से क्रीम निकालने के १२ कारखाने खोले जाएँगे ।

इसके अलावा, इस अवधि में ३६ मुख्य शहरों में एक-एक दूध सहकारी संघ का संगठन किया जाएगा। ये संघ अपने-अपने क्षेत्रों के लोगों को दूध पहुँचाने की व्यवस्था करेंगे । इनमें से दो संघों में प्रतिदिन ५०० मन दूध, आठ में २५० मन दूध और २६ संघों में १५० मन दूध का कारोबार होगा ।

देहातों में दूध का उत्पादन सहकारी ढंग पर संगठित किया जाएगा जिससे देहात के लोग दूध इकट्ठा करने वाले केन्द्रों के ज़रिये बनने वाली वस्तुओं के सहकारी संघों तथा दूध कारखानों को अपना दूध आसानी से पहुँचा सकेंगे ।

जिन देहाती क्षेत्रों में प्रतिदिन १०० मन से २०० मन तक दूध मिल सकता है, वहाँ क्रीम निकालने के केन्द्र चलाए जाएँगे । इनका संगठन भी सहकारी आधार पर होगा । जिन क्षेत्रों में प्रतिदिन ३०० मन से ५०० मन तक दूध मिल सकता है, वहाँ दूध से बनने वाली वस्तुओं के कारखाने खोले जाएँगे ।

दुग्धशाला विकास योजनाओं को केन्द्र ग्राम योजना से सम्बद्ध किया जाएगा, क्योंकि इसके अन्तर्गत पशु रखने वालों को पशु-पालन से सम्बन्धित सुविधाएँ उपलब्ध की जाती हैं ।

बाढ़ नियन्त्रण योजनाओं में सहायता

सामुदायिक विकास-योजना प्रशासन ने सभी राज्यों के विकास-आयुक्तों तथा सामुदायिक विकास योजनाओं के निर्देशकों को सुझाव दिया है कि योजना तथा खण्डों के कर्मचारी अपने-अपने क्षेत्रों में सरकार की बाढ़ नियन्त्रण तथा सिंचाई योजनाओं में जनता का भरपूर सहयोग प्राप्त करने में सहायता दें ।

सामुदायिक विकास-योजना प्रशासन ने कहा है कि समान्यतः योजना तथा खण्डों के कर्मचारी विकास क्षेत्रों से विभिन्न विभागों के कार्यों में समन्वय स्थापित करने में सहायता करते हैं । बाढ़ नियन्त्रण तथा सिंचाई योजनाओं को कार्यान्वित करने के लिए प्रशासन कर्मचारी तथा विस्तार कर्मचारियों के कार्यों में समन्वय ज़रूरी है ।

अतः सुझाव दिया गया है कि समाज शिक्षा संगठनकर्त्ताओं को योजनाओं के विशेषज्ञों से सम्पर्क रखना चाहिए, जिससे यह पता चल सके कि किन योजनाओं को जनता को समझाने की आवश्यकता है । बाढ़ नियन्त्रण तथा सिंचाई की योजनाओं के बारे में समाज शिक्षा संगठनकर्ताओं को विकास क्षेत्रों में आवश्यकता पड़ने पर दो काम करने चाहिएँ—

(१) जनता को यह समझाना कि बाढ़ तथा अकाल से कितनी भयंकर हानि हुई है, ऐसी स्थिति में योजनाओं की क्या उपयोगिता है और कितनी शीघ्रता से उन्हें पूरा करना है ।

(२) स्थानीय जनता को विभिन्न योजनाओं में काम करने के लिए प्रोत्साहन देना ।

नई फ़सल, नई पौध !

Regtd. No. D-28

उत्कृष्ट प्रकाशन

महात्मा गान्धी

महात्मा गान्धी की कहानी—चित्रों में

यह चित्रमय कहानी काल क्रम अनुसार है और महात्मा गान्धी के अलौकिक जीवन के महत्वपूर्ण अध्यायों में बँटी हुई है। यह आशा की जाती है कि इस समय तक उनके जीवन तथा कार्य-कलाप के सम्बन्ध में जो प्रचुर सामग्री एकत्र हुई है यह प्रकाशन उसका उपयुक्त चित्रमय पूरक प्रमाणित होगा।

सादा जिल्द १०) रु०
सिल्क जिल्द १५) रु०

स्वाधीनता और उसके बाद—
जवाहरलाल नेहरू के भाषण

प्रधान मंत्री नेहरू के १९४६ से १९४९ तक विशेष अवसरों पर दिए गए ६० महत्वपूर्ण भाषण। स्वाधीनता, महात्मा गांधी, साम्प्रदायिकता, काश्मीर, हैदराबाद, शिक्षा, उद्योग, भारत की वैदेशिक नीति, भारत और राष्ट्र मण्डल, भारत और विश्व, आदि विषयों पर। सभी दृष्टियों से संग्रहणीय और पठनीय ग्रन्थ। रु० ५)

भारत दर्शन

(चित्रों में)

भारत की कहानी दिग्दर्शित करने वाले विविध चित्रों का अनमोल संग्रह है। देश के निवासी, पशु, वनस्पति, प्राकृतिक रचना, आदि का विहंगावलोकन। भारतीय जीवन विचारधारा, परिस्थिति, प्राकृतिक दृश्य इत्यादि, विभिन्न पहलुओं का स्थलानुरूप समावेश। रु० ७।)

भारतीय कला का सिंहावलोकन

मोहिन्जोदरो के समय से लेकर भारत के प्राचीन मध्ययुगीन तथा आधुनिक कला के ३७ रंगीन और १०० एक रंगी चित्रों का संग्रह। रु० ६।।)

भारत की एकता का निर्माण

अगस्त १९४७ से दिसम्बर १९५० तक भारत के इतिहास के तेजस्वी काल में दिए गए सरदार वल्लभ भाई पटेल के २७ महत्त्वपूर्ण भाषण जो स्वतन्त्र भारत के निर्माण का यथार्थ प्रमाण हैं कई दुर्लभ चित्रों सहित। रु० ५)

पब्लिकेशन्स डिवीज़न,
ओल्ड सेक्रेटरिएट, दिल्ली—८

Printed at the Mufid-i-'Am Press, Delhi, and Published on behalf of Community Projects Administration by the Publications Division Delhi-8.